कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 55 अंक : 1 नवम्बर 2008 मूल्य : 10 रुपये

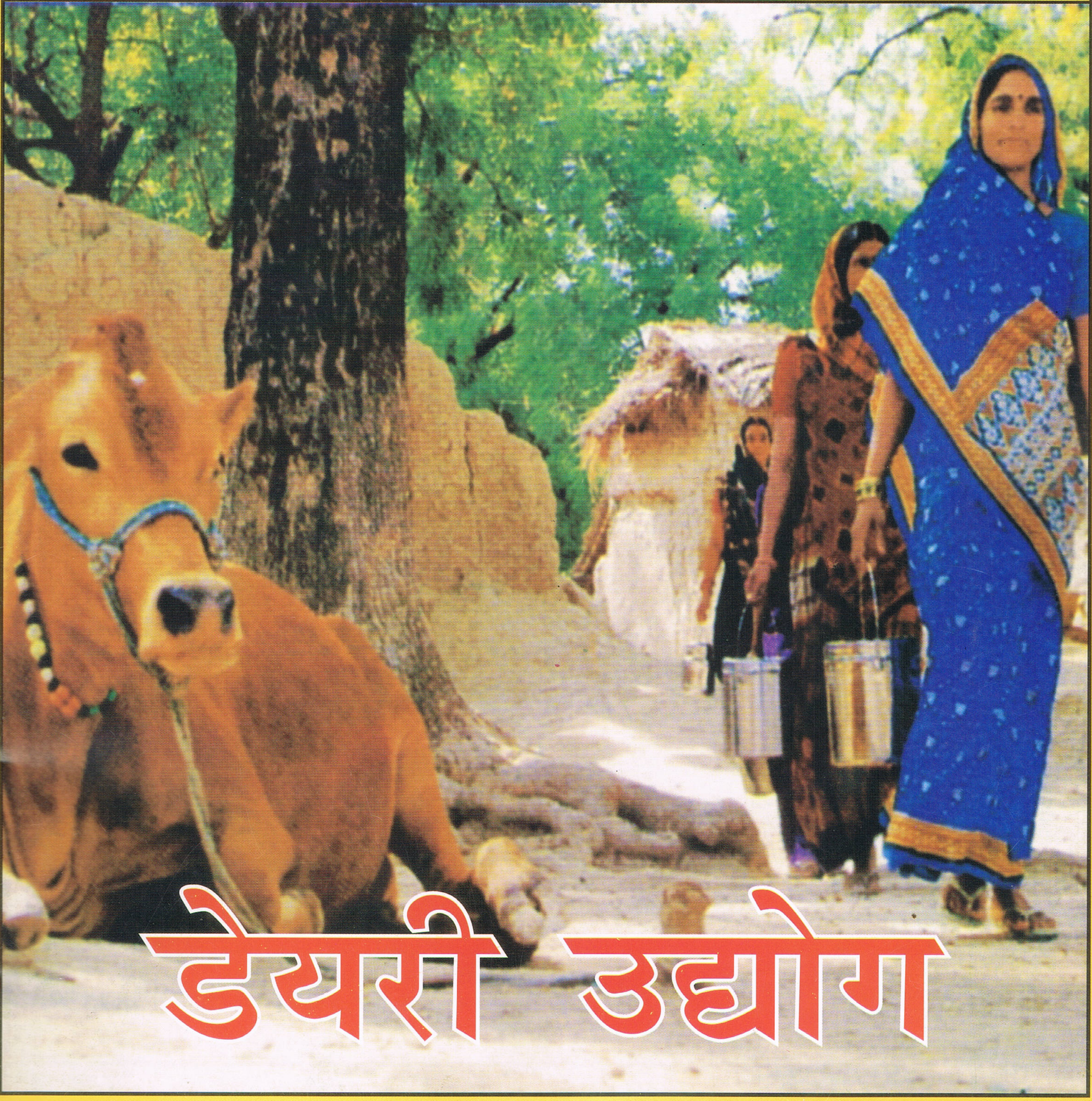

उपभोक्ता कानून का ज्ञान
आपकी समस्याओं का समाधान

सयानी रानी की सलाह....

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के प्रावधानों की जानकारी प्राप्त करें और एक जागरूक उपभोक्ता बनें....

जागो ग्राहक जागो

शिकायत कौन कर सकता है

* उपभोक्ता
* कोई स्वैच्छिक उपभोक्ता संगठन जो कम्पनी अधिनियम 1956 अथवा फिलहाल लागू किसी अन्य विधि के अधीन पंजीकृत है।
* केन्द्र सरकार अथवा राज्य सरकार
* एक अथवा एक से अधिक उपभोक्ता
* उपभोक्ता की मृत्यु की दशा में, उसके कानूनी वारिस अथवा प्रतिनिधि

शिकायत किन स्थितियों में

* किसी व्यापारी द्वारा अनुचित/प्रतिबंधात्मक पद्धति के प्रयोग करने से यदि आप को हानि/क्षति हुई है
* यदि खरीदे गए सामान में कोई खराबी है
* किराए पर ली गई/उपयोग की गई सेवाओं में किसी भी प्रकार की कमी पाई गई है।
* यदि आप से प्रदर्शित मूल्य अथवा लागू कानून द्वारा तय मूल्य अथवा दोनो पक्षों द्वारा स्वीकृत मूल्य से अधिक मूल्य लिया गया है।
* यदि किसी कानून का उल्लंघन करते हुए जीवन तथा सुरक्षा के लिए जोखिम पैदा करने वाला सामान जनता को बेचा जा रहा है

उपभोक्ताओं को उपलब्ध राहत

* सामान से खराबियां हटाना
* सामान को बदलना
* चुकाए गए मूल्य को वापिस देना
* हानि अथवा चोट के लिए क्षतिपूर्ति
* सेवाओं में त्रुटियां अथवा कमियां हटाना
* पार्टियों को पर्याप्त न्यायालय वाद–व्यय प्रदान करना
* व्यापारी द्वारा अनुचित/प्रतिबंधात्मक पद्धति के प्रयोग पर रोक
* जीवन तथा सुरक्षा के लिए जोखिम पैदा करने वाला सामान के विक्रय पर रोक

अपने क्षेत्र के उपभोक्ता फोरम का पता करने के लिए ncdrc.nic.in पर लॉग ऑन करें।

उपभोक्ता राष्ट्रीय हेल्पलाइन नंबर
1800–11–4000 (निःशुल्क) पर सम्पर्क कर सकते हैं।
(बीएसएनएल/एमटीएनएल लाइनों से)
अथवा 011–27662955,56,57,58 (सामान्य कॉल दरें)
(9.30 प्रातः से 5.30 सायं – सोमवार से शनिवार)

सत्यमेव जयते

जनहित मे जारी
उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार
कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001 : वेबसाइट : www.fcamin.nic.in

KH-11/08/01

वर्ष : 55 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48
कार्तिक–अग्रहायण 1930, नवंबर 2008

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

❑ दूध उत्पादक सहकारी समितियां और महिलाएं	सत्येन्द्र कुमार	3
❑ उत्तराखंड में डेयरी उद्योग	संतोष कुमार सिंह	6
❑ उत्तर प्रदेश में डेयरी उद्योग का अवलोकन	डॉ. नरेश चन्द त्रिपाठी	10
❑ राजस्थान में डेयरी उद्योग एवं सहकारिता	सीमा सोनी	12
❑ भेड़ के दूध से पोषक तत्व एवं आहार उत्पाद	डॉ. आनन्द ओझा	17
❑ दूसरी श्वेत क्रांति के मुहाने पर भारत	लोकेश कुमार	21
❑ हमारे जीवन में गाय का महत्व	डॉ. मोती सिंह राठौड़	24
❑ दूध उत्पादन- आय व रोजगार का साधन	रमेश कुमार दुबे	27
❑ सिंथेटिक दूध - समस्या और समाधान	डॉ. सविता जैन	32
❑ बाल श्रम: समस्या और निदान	डॉ. अनिता मोदी	35
❑ नक्सलवाद ग्रामीण विकास में रुकावट	डॉ. एस.के.मिश्रा	38
❑ पौष्टिक चारे से भरपूर बरसीम	डॉ. अंशु राहल	42
❑ रोग निवारक दही और छाछ	डॉ. जय सिंह	46

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

भारत दुनिया में दूध और दूध से बने उत्पादों का तेजी से विकसित होता बाजार है। वर्ष 2006–07 में भारत में दूध उत्पादन 10.9 करोड़ टन था जोकि विश्व के कुल उत्पादन का 15 प्रतिशत है। वर्ष 2007–08 में दूध उत्पादन 10.2 करोड़ टन होने का अनुमान है । वर्ष 2010 तक दूध उत्पादन 11.10 करोड़ टन तक ले जाने का लक्ष्य रखा गया है। दूध उत्पादन में विश्व में पहला स्थान हासिल करने के बावजूद हमारे यहां दूध की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खपत 246 ग्राम ही है जोकि विश्व की औसत खपत 265 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से कम है। इसी के मद्देनजर सरकार का मुख्य प्रयास अब दुधारू पशुओं की नस्ल में सुधार लाना है ताकि प्रति व्यक्ति दूध उत्पादन बढ़ाया जा सके। परिणामस्वरूप दूध की खपत दर में भी बढ़ोतरी होगी।

हमारे देश में डेयरी उद्योग करोड़ों गरीब परिवारों की रोजी–रोटी का जरिया बना हुआ है। हमारे यहां उत्पादित दूध का 80 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र से तथा शेष 20 प्रतिशत सहकारी एवं निजी डेयरियों से आता है। अधिकतर दूध का उत्पादन ग्रामीण स्तर पर छोटे सीमांत किसानों तथा भूमिहीन मजदूरों द्वारा किया जाता है। इन्हें स्थिर बाजार तथा उत्पादित दूध का लाभकारी मूल्य देने के लिए आपरेशन फ्लड कार्यक्रम के एक हिस्से के रूप में देश में एक लाख से भी अधिक ग्राम–स्तरीय सहकारिता सोसाइटियों के तहत 1.2 करोड़ किसानों को लाया गया है।

डेयरी क्षेत्र में विकास की गति को बनाए रखने के लिए सरकार समय–समय पर प्रयास करती रही है। ग्यारहवीं योजना में पशुपालन के लिए 780 करोड़ रुपये और डेयरी विकास के लिए 2776 करोड़ रुपये दिए जाने का प्रावधान किया गया है। इस दौरान पशुधन से सकल वृद्धि को 6 से 7 प्रतिशत के बीच लाने का लक्ष्य रखा गया है। इसमें दूध समूह से प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत की वृद्धि तथा मीट और कुक्कुट समूह से 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी हासिल करना शामिल है। वर्ष 2006–07 में कुल सकल घरेलू उत्पाद में पशुधन तथा मात्स्यिकी क्षेत्र का अंशदान 5.26 प्रतिशत था।

संक्षेप में कहा जाए तो देश में डेयरी उद्योग का भविष्य उज्जवल है किंतु सिंथेटिक दूध के बढ़ते मामले इसकी प्रगति में बाधक हो सकते हैं। भारतीय डेयरी संघ द्वारा किए गए शोध में इस बात की पुष्टि की गई है कि दूध में घातक रसायनों की मिलावट धड़ल्ले से जारी है। सरकार को चाहिए कि मिलावटी दूध के मामलों से ढिलाई से नहीं निपटा जाए क्योंकि ये लोगों की जिंदगी से खिलवाड़ का मामला है और दोषी लोगों को सख्त से सख्त सजा दी जाए। साथ ही, सिंथेटिक दूध का गोरखधंधा रोकने के लिए भी गंभीर प्रयास किए जाने की जरूरत है। ऐसे में इस दिशा में कठोर कानून बनाने के साथ–साथ जन–जागरुकता भी जरूरी है जिससे लोग स्वयं असली और सिंथेटिक दूध के बीच अंतर की जांच कर सकें। साथ ही, दूध की समय–समय पर आकस्मिक जांच की जानी जरूरी है ताकि इस धंधे में लिप्त लोगों को जल्द से जल्द पकड़ उनके खिलाफ कार्यवाही की जा सके।

दूध उत्पादक सहकारी समितियां और महिलाएं

सत्येन्द्र कुमार

दूध हमेशा ही किसी ना किसी रूप में हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है चाहे वह खाने–पीने की बात हो या फिर पूजा–पाठ आदि की बात हो। रोजगार उत्पन्न करने तथा आदमी के जीवन निर्वाह के लिए भी यह एक रोजगारजनक के रूप में देखा जाता है। स्वतंत्रता के बाद भारत में सहकारी दुग्ध उत्पादन सफलता की हमारी महान गाथाओं में शामिल रहा है और ग्रामीण क्षेत्रों के सामाजिक–आर्थिक विकास पर इन दुग्ध सहकारी संघों का गहरा प्रभाव रहा है। आज स्थिति यह है कि भारत दुनिया का सबसे बडा दुग्ध उत्पादक देश बन गया है जहां लगभग हर वर्ष 10.2 करोड़ मीट्रिक टन दूध का उत्पादन होता है।

गांवों का देश होने के नाते भारत के आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण विकास आवश्यक है। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों के आर्थिक कल्याण और जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए उचित स्तर पर प्रयास किए जाएं। विकसित और विकासशील, दोनों ही अर्थव्यवस्थाओं में तृतीयक क्षेत्र की पहचान सामाजिक–आर्थिक विकास खासकर ग्रामीण लोगों के विकास में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में की गई है। यह ऐसा क्षेत्र है जो कृषि और अनुषंगी गतिविधियों के माध्यम से सामाजिक–आर्थिक विकास कार्यक्रमों को लागू करने और साथ में ग्रामीण विकास में कई तरह से बहुमूल्य योगदान कर रहा है। इसी संदर्भ में दूध उत्पादन सहकारी संगठनों के विभिन्न पहलुओं, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सामाजिक–आर्थिक विकास में उनकी भूमिका आदि का अध्ययन आवश्यक हो गया।

भारत में डेयरी सहकारिता का विकास

भारत में डेयरी विकास के प्रारंभिक प्रयास ब्रिटिश शासनकाल में उस समय से खोजे जा सकते हैं, जब रक्षा विभाग ने औपचारिक सेना के लिए दूध और घी की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए सैन्य डेयरी फार्मों की स्थापना की थी। इस तरह का पहला फार्म सन् 1913 में उ०प्र० के इलाहाबाद शहर में स्थापित किया गया था। बाद में बंगलौर और करनाल में इसी तरह के फार्म खोले गए। इसके बाद द्वितीय विश्वयुद्ध में भी कुछ हद तक आधुनिक प्रसंस्करण सुविधाओं के साथ निजी डेयरी उद्योग को बढ़ावा दिया गया। समय बीतता गया और भारत में आयोजना काल शुरू होने के साथ ही डेयरी उद्योग का भी भविष्य उज्जवल हो गया और सरकार ने पहली ही योजना (1951) में इस उद्योग को प्राथमिकता दी। इसका लक्ष्य देश की बढ़ती शहरी आबादी के लिए स्वास्थ्यवर्धक दूध उपलब्ध कराना था। इस दिशा में सरकार के प्रारंभिक प्रयासों में बड़े शहरों के लिए दूध योजना विभागों की स्थापना भी की गयी थी। दूध उत्पादन में तेजी लाने के लिए सरकार ने एकीकृत पशु विकास परियोजना और महत्वपूर्ण ग्राम योजना आदि कार्यक्रम लागू किए हैं।

डेयरी उद्योग महिलाओं के लिए रोजगार का बेहतर अवसर

डेयरी विकास के लिए आनंद मॉडल के प्रयासों को बढ़ावा देने के लिए तैयार किए प्रमुख कार्यक्रमों में ऑपरेशन फ्लड शामिल है। श्वेत क्रांति का पहला चरण 1970 में विश्व खाद्य कार्यक्रम के साथ एक समझौते के बाद प्रारंभ हुआ। इसके अंतर्गत विश्व संगठन ने कार्यक्रम के लिए अर्थ प्रबंध सहायता के रूप में कुछ कच्चा माल उपलब्ध कराया। कार्यक्रम के अंतर्गत ग्राम स्तर पर डेयरी सहकारी संस्थाओं का गठन, दूध खरीदने, उसके प्रसंस्करण, विपणन और उत्पादन वृद्धि सेवाओं के लिए यूनियन स्तर पर भौतिक और संस्थागत ढांचा तैयार करने, और भारत के प्रमुख महानगरीय केंद्रों में डेयरियों की

स्थापना जैसे प्रयास शामिल थे। कार्यक्रम का लक्ष्य हासिल करने में धवल क्रांति के पहले चरण ने आधुनिक भारतीय उद्योग की आधारशिला रखी। यह एक ऐसा उद्योग था जिसे अंततः दूध और दूध उत्पादों की देश की आवश्यकता पूरी करनी थी। 1970 के दशक के शुरू में धवल क्रांति के विस्तार की तुलना व्यापक हरित क्रांति से की गयी।

श्वेत क्रांति का दूसरा चरण 1981 और 1985 में लागू किया गया। पहले चरण के दौरान निर्मित आधारभूत सुविधाओं को ध्यान में रखकर इस चरण में भारतीय डेयरी एसोसिएशन की सहायता से कुछ राज्यों में जारी डेयरी विकास परियोजनाओं को एक समग्र कार्यक्रम में एकीकृत करने का प्रयास किया गया। विश्व बैंक ने भी इस योजना के लिए आर्थिक मदद की है जिससे इस परियोजना की महत्ता साबित होती है।

श्वेत क्रांति के वर्तमान चरण यानी तीसरे चरण का लक्ष्य सहकारी संस्थानों के लिए आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करना है। कार्यक्रम के लिए विश्व बैंक ने 37 करोड़ अमेरिकी डॉलर, यूरोपीय आर्थिक समुदाय ने वस्तु और नकद सहायता तथा राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने अपने आंतरिक संसाधनों से धन निवेश किया है। कार्यक्रम के दौरान डेयरी प्रसंस्करण और विपणन सुविधाओं का व्यापक विस्तार करने, दूध खरीदने के लिए आधारभूत ढांचे को बढ़ावा देने, उत्पादन बढ़ाने की गतिविधियों के दायरे का विस्तार करने और डेयरी संस्थानों में प्रबंधन का व्यावसायीकरण करने का प्रयास आज भी जारी है।

महिला डेयरी सहकारिता

किसान और कृषि श्रमिक दोनों के लिए वर्तमान में अपने परिवार तथा स्वास्थ्य को बनाये रखना मुश्किल हो रहा है। ग्रामीण गरीब मुश्किल से 100–150 दिन का ही काम प्राप्त कर पा रहे हैं। यहां तक कि सघन कृषि वाले क्षेत्रों में भी, जहां काम की उपलब्धता अधिक है, यह खास मौसम के कुछ महीनों में ही है। पत्नी और कुछ बच्चों के साथ निर्वाह के लिए पति की आय हमेशा अपर्याप्त है। यद्यपि महिलाएं भी काम करने के लिए इच्छुक हैं, परंतु अवसर कम हैं और पारिश्रमिक भी कम है। नीति निर्धारकों के लिए महिलाओं को लाभकारी रोजगार की ओर आकृष्ट करना हमेशा एक मुद्दा रहा है। आनंद दुग्ध संघ को अनुभव होते ही ग्रामीण महिलाओं को शामिल कर ग्रामीण रोजगार के राष्ट्रीय कार्यक्रम में डेयरी आंदोलन मुख्य रूप से चिन्हित कर लिया गया था। आठवें दशक तक आंध्र प्रदेश में डेयरी सहकारिताओं में महिलाओं के सराहनीय निष्पादन ने इसे अन्य राज्यों में लागू करने के लिए उत्साहित किया। इस तरह डेयरी कार्य को परिवार से संबद्ध माना गया तथा मिश्रित लिंग वाली सहकारिताओं की वकालत को समर्थन मिला।

परंतु केवल महिलाओं वाली सहाकारिताओं ने यह प्रदर्शित किया कि इसके कार्यक्रम आयोजना में लिंग आधारित अंतःक्षेपों ने न केवल आय और रोजगार की वृद्धि की बल्कि परिवार और समाज में महिलाओं की स्थिति भी बेहतर हुई तथा उन्हें समाज में अधिक बड़े परिवर्तन की ओर उन्मुख किया।

महिला डेयरी सहकारिता सोसाइटी को गठित करने हेतु परियोजना के तहत परीक्षक उपस्करों सहित निवेश, प्रबंधकीय आर्थिक सहायता, दुधारू पशुओं के क्रय हेतु अतिरिक्त राशि, चारा, खनिज मिश्रण, सामान्य सदस्यों, समिति सदस्यों तथा क्षेत्र भ्रमण और रोजगार समर्थक सेवाएं भी उपलब्ध कराई गई थी। स्वयंसहायता समूहों का गठन तथा अनौपचारिक शिक्षा देना भी ऐसे आयाम थे जिनका प्रचार करने पर विचार किया गया था। डेयरी संगठन के अंदर फेडरेशन तक सहकारिता संरचना के सभी पदानुक्रमों से प्रतिस्पर्धा करने की सुविधा महिलाओं को प्रदान करने पर भी विचार किया गया। सामाजिक उद्धार की अपेक्षाओं के अनुसार महिला डेयरी सहकारिता सोसाइटी ग्रामीण महिला नेतृत्व के विकास में मदद करेगी। यह इस तथ्य से प्रमाणित है कि ये महिलाएं कई स्वयंसहायता समूहों का गठन कर रही हैं जो उपभोक्ता भंडार, स्कूल की वर्दी, चाक बनाने, पेपर, पापड़ तथा अचार बनाना आदि तमाम गतिविधियां चला रही हैं। महिलाओं की इन सभी क्रियाओं से ग्रामीण भारत में ग्रामीण उद्यमियों तथा ग्रामीण महिला नेतृत्व का विकास हुआ है।

हाल ही के वर्षों में ग्रामीण–स्तरीय नेतृत्व सामान्यतः पारंपरिक तथा इसका दृष्टिकोण रूढ़िवादी रहा है और छुआछूत को मानता रहा है। अब यह कलंक तेजी से मिट रहा है। इस महिला सोसाइटी में अधिकतर महिलाएं पिछड़ी जातियों से हैं। विभिन्न जाति की महिलाओं को एक साथ देखना अपने आप में एक अलग किस्म का अनुभव है। यह केवल एक समूह के माध्यम से लोगों का निकट आना नहीं है बल्कि वर्षों से मौजूद जातिगत विद्वेषों का टूटना भी है। अवशोषक कार्य के अलावा इस सोसाइटी ने विभिन्न वर्ग की कृषक महिलाओं को कुछ विशिष्ट लाभ भी प्रदान किए हैं। यह लाभ अमीर एवं गरीब दोनों को प्राप्त है तथा विशेषतः उच्च जाति की उन महिलाओं को भी जिन्होंने पहले कभी पशुपालन कार्य नहीं किया है। मध्यम जाति के किसानों हेतु संगठन के स्तर पर साधारण लाभ की भी प्राप्ति होती है।

महिला डेयरी सहकारिता सोसाइटी की सफलता के कई ऐसे प्रतिबिम्ब है, जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता। प्रत्येक ग्राम में इस सोसाइटी में औसतन 50–55 सदस्य हैं और उनमें से करीब दो तिहाई निश्चित रूप से लाभार्थी हैं। इस तरह एक गांव में कम से कम 35 परिवार मुख्य व्यवसाय के रूप में डेयरी से आर्थिक लाभ प्राप्त करने लायक है, जबकि प्रत्येक गांव में कम से कम दो महिलाएं सीधी लाभार्थी हैं। सचिव, दूध टेस्टर, प्राथमिक पशु चिकित्सा कार्यकर्ता एवं प्रधान लदानकर्ता जैसे सभी तकनीकी कुशल कार्यकर्त्ताओं को अब अतिरिक्त काम मिल गया है। अग्रणी टीम के छोटे समूह के अलावा प्रबंध समिति के नौ सदस्यों, एक अध्यक्ष, जो सामान्यतः ग्रामीणों में सामान्य एक सौम्य महिला होती है, को भी जन संगठनों के लोकतांत्रिक प्रबंध में प्रशिक्षित किया जाता है। ऐसे सभी गांवों में महिलाओं का एक मुख्य समूह है और इन गांवों के इतिहास में पहली बार नए प्रकार के नेतृत्व का उदय हुआ है।

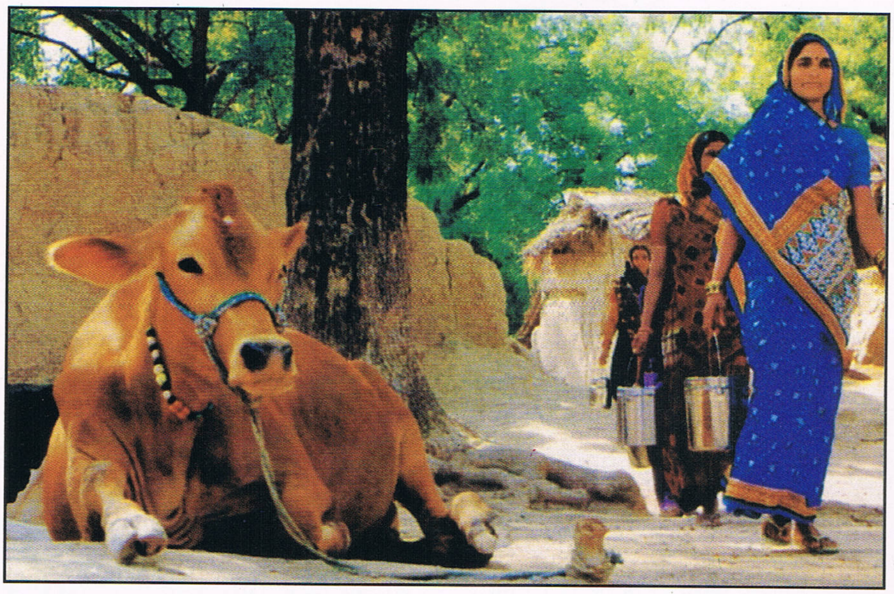

भारत में सहकारिता आंदोलन के 100 वर्ष पूरे हो चुके हैं। सारा देश इस आंदोलन के शताब्दी समारोह मनाने में लगा है। यह विश्व के सबसे बड़े आंदोलनों में से एक है तथा विभिन्न प्रकार की क्रांतियां लाने में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। यह संपूर्ण ग्रामीण भारत में क्रांति ला रहा है। इस आंदोलन का योगदान ग्रामीण ऋण वितरण, उर्वरक का उत्पादन एवं वितरण, चीनी का उत्पादन, दूध का वितरण तथा अन्य कृषि निवेशों आदि में देखा जा सकता है। महिलाओं के स्वामित्व, प्रबंध तथा नियंत्रण वाली सहकारिताओं के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। मानव संसाधन विकास मंत्रालय की महिला डेयरी परियोजना के अंतर्गत गठित महिला डेयरी सहकारी समितियां सहकारिता आंदोलन में महिलाओं के शामिल होने के सफल उदाहरण हैं। महिला डेयरी सहकारिता के मूल्यांकन से यह स्पष्ट होता है कि इसने महिलाओं की आय और रोजगार बढ़ाने में मदद की। अब उनके पास न सिर्फ पैसे हैं बल्कि अपनी आय पर कुछ सीमा तक नियंत्रण भी है, जिसका इस्तेमाल घरेलू खर्चों तथा व्यक्तिगत जरूरतों के लिए होता है। सामूहिक अंतर्क्रियाओं तथा बाहरी दुनिया की जानकारी ने उनकी जागरुकता बढ़ाने में मदद की जो स्वच्छता, सफाई तथा अग्रिम सोच के रूप में परिलक्षित होता है। वे अब पुत्रों और पुत्रियों दोनों के साथ समान रूप से व्यवहार करती हैं।

इस तरह केवल सहकारी संस्थाओं के माध्यम से ही आम आदमी निर्णायक तरीके से सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन को प्रभावित कर सकता है। वास्तव में भारत में सहकारिता को भारतीय समाजवाद, खासकर ग्रामीण समाज के संदर्भ में समाजवाद के एक अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। सहकारिता के माध्यम से हम उच्चस्तरीय और खुशहाल जीवन स्तर प्रभावकारी ढंग से हासिल कर सकते हैं। सहकारिता को बेहतर व्यापार, बेहतर खेती और बेहतर जीवनशैली के रूप में स्वीकार किया गया है। अतः देखा जाए तो डेयरी सहकारी समितियां अपने में बेजोड़ हैं। उन्होंने ग्रामीण भारत में किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। डेयरी सहकारी समितियों की ग्रामीण भारत में कृषि, रोजगार, आय, स्वास्थ्य और स्वच्छता की स्थितियों, पोषण और शिक्षा के विकास में बहुआयामी भूमिका है। इस क्षेत्र में व्यक्ति, समूह और सरकार ने उपयुक्त भूमिका अदा की है। इस नेटवर्क प्रणाली की ग्रामीण विकास में प्रशंसनीय भूमिका रही है, जो विभिन्न स्तरों के साथ जुड़ी हुई है। सहकारिता आंदोलन में व्यक्तियों की भूमिका भली–भांति परिभाषित है। समिति और सरकार दोनों ही ग्रामीण लोगों के विकास और विकास प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के लिए अनिवार्य हैं। इसीलिए भारत जैसे देश में ग्रामीण विकास के लिए डेयरी सहकारिता काफी उपयुक्त है।

(लेखक पशुपालन विभाग में अधिकारी हैं तथा महिला डेयरी विकास संबंधी एन.जी.ओ. से जुड़े हैं।)
ई:मेल : satyendra421@yahoo.com

उत्तराखंड में डेयरी उद्योग

संतोष कुमार सिंह

पशुपालन उद्योग भारत का प्राथमिक उद्योग है और इसी उद्योग पर ही भारत का डेयरी उद्योग आधारित है। डेयरी उद्योग के अंर्तगत दूध देने वाले पशुओं का पालन किया जाता है। भारत में सन् 2005–06 में पशुओं की संख्या 282.3 लाख थी जिसमें गाय 185.2 लाख एवं भैंस 97.1 लाख थी जो विश्व में सबसे अधिक है। इन दुधारू पशुओं से 100.2 मिलियन टन दूध का वार्षिक उत्पादन हो रहा है और विश्व के कुल दुग्ध उत्पादन में 15 प्रतिशत की हिस्सेदारी के साथ भारत सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है। भारत में डेयरी उद्योग को बढ़ावा देने के लिए सन् 1965 में देश में सर्वप्रथम राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड एवं सन् 1970 में भारतीय डेयरी निगम के अर्न्तगत "श्वेत क्रान्ति" का शुभारंभ हुआ जिसमें डॉ. वर्गीज कुरियन द्वारा किए गए कार्यों को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता। इन दोनों संस्थाओं का उद्देश्य सहकारी समितियों के द्वारा डेयरी उद्योग के विकास को गति देना था। सहकारी समितियों की स्थापना करके ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों और शहरी उपभोक्ताओं के मध्य संबंध स्थापित करने की चेष्टा की गई। जहां 1950–51 में दुग्ध उत्पादन 17 मिलियन टन था वहीं 2006–07 में दुग्ध उत्पादन 100.9 मिलियन टन हो गया। सन् 2020 तक 200 मिलियन टन दुग्ध उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। वर्तमान में भारत की कुल राष्ट्रीय आय का लगभग 14 प्रतिशत भाग डेयरी उद्योग से प्राप्त हो रहा है।

नवोदित प्रदेश उत्तराखंड की स्थापना 9 नवंबर, 2000 को की गई। इस प्रदेश में 77 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है जोकि अधिकांश गरीब और अशिक्षित हैं। उत्तराखंड का आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए यहां के ग्रामों की आवश्यकताओं, सामाजिक परिवेश एवं संस्कृति को ध्यान में रखते हुए ग्राम स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का सर्वांगीण विकास करते हुए समुचित दोहन किया जाना बेहद जरूरी है। इस कार्य हेतु क्षेत्र के सर्वप्रथम संसाधन मानव शक्ति के समग्र विकास के लिए उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा एवं रोजगार की व्यवस्था किए जाने को शीर्ष प्राथमिकता देते हुए डेयरी विकास विभाग, उत्तराखंड द्वारा ग्रामीण स्तर पर सशक्त एवं सफल प्रयास किए जा रहे हैं, जिससे प्रदेश में डेयरी उद्योग को बढ़ावा मिल सके।

सन् 2006–07 के अंत तक उत्तराखंड में कुल 36.15 लाख दुधारू पशु थे जिनमें 27.89 लाख गाय तथा 14.26 लाख भैंस थी। प्रदेश सरकार ने डेयरी उद्योग को स्वरोजगार एवं अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार बनाकर प्रदेश के सकल घरेलू उत्पाद में निरंतर वृद्धि के लिए ठोस प्रयास किए हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रदेश में 2002–03 में नेशनल कैटल एण्ड बफैलो ब्रीडिंग प्रोजेक्ट शुरू किया गया। गाय एवं भैंस पशु धन को उन्नत कर उनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता में वृद्धि करने हेतु केंद्रीय सरकार से वित्तपोषित इस योजना के संचालन के लिए सरकार ने उत्तराखंड पशु धन विकास बोर्ड का गठन किया है। योजना के 5 वर्षों के दौरान 8.08 करोड़ रुपये व्यय किए जा चुके हैं। साथ ही नैनीताल में डेयरी शोध एवं विकास केंद्र, उत्तराखंड, की स्थापना हेतु 79.55 लाख रुपये प्रस्तावित किए गए हैं, जो प्रदेश में डेयरी विकास के लिए सराहनीय कदम कहा जा सकता है।

उत्तराखंड में डेयरी उद्योगों की दशा सुधारने एवं दिशा निर्धारित करने के लिए प्रदेश सरकार द्वारा अनेक योजनाएं संचालित की जा रही हैं, जिनका विवरण निम्न है –

डेयरी विकास विभाग के प्रयास

उत्तराखंड में डेयरी का विकास कैसे हो, इस दृष्टि से उत्तराखंड में डेयरी विकास विभाग ने कुछ उद्देश्य निर्धारित किए हैं–

- ग्रामीण क्षेत्रों में दुग्ध उत्पादकों की सहकारी समितियां गठित करते हुए उन्हें उनके द्वारा उत्पादित दूध की गुणवत्ता के आधार पर उचित कीमत दिलाना।
- ग्रामीण स्तर पर स्वरोजगार के साधन उपलब्ध कराना।
- दुग्ध उत्पादकों को बिचौलियों के शोषण से बचाना।
- गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को बढ़ावा देना।
- नगरीय क्षेत्रों की ओर पलायन रोकना।
- उचित दर पर शुद्ध दूध एवं दुग्ध पदार्थों की आपूर्ति करना।
- ग्रामीण स्तर पर पशु स्वास्थ्य सेवाएें, टीकाकरण व संतुलित पशु आहार की आपूर्ति करते हुए दुग्ध उत्पादन में वृद्धि हेतु सतत् प्रयास करना।
- दुग्ध उत्पादकों को समय–समय पर पशुपालन, चारा विकास, दुग्ध उत्पादन व स्वच्छ दुग्ध उत्पादन आदि की नवीनतम तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराना।

डेयरी विकास विभाग का कार्य "आनन्द प्रणाली" पर आधारित त्रिस्तरीय सहकारी पद्धति द्वारा संचालित किया जा रहा है जिसके

अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में दुग्ध उत्पादक सहकारी समिति व जिला स्तर पर दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ तथा प्रदेश स्तर पर उत्तराखंड सहकारी डेयरी फेडरेशन गठित किया गया है। वर्तमान में लगभग 2500 दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां तथा 11 दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ गठित किए गए हैं। इनके माध्यम से डेयरी विकास कार्यक्रम क्रियान्वित किए जा रहे हैं। विभिन्न दुग्ध संघों में आपसी समन्वय तथा उनके पर्यवेक्षण व दिशा–निर्देशन हेतु उत्तराखंड सहकारी डेयरी फेडरशन कार्यरत है जिसका मुख्यालय हल्द्वानी (नैनीताल) है।

दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ लि. के माध्यम से 1,24,269 लीटर दुग्ध प्रतिदिन संग्रह किया जा रहा है जिसमें 1.22 लाख दुग्ध उत्पादकों की प्रत्यक्ष भागीदारी है।

महिला डेयरी विकास परियोजना

उत्तराखंड की ग्रामीण महिलाओं को उनकी विषम स्थिति से उभारते हुए उनकी आय अर्जक संसाधनों की वृद्धि, संपति अर्जन, आत्मविश्वास, स्वावलंबन, शिक्षा, जागरुकता, महिला एवं शिशु स्वास्थ्य, स्वच्छता, सामाजिक एवं आर्थिक शोषण से रक्षा तथा महिलाओं का समग्र सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान करते हुए उन्हें क्षेत्र के आर्थिक विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के उद्देश्य से महिला डेयरी विकास परियोजना की स्थापना सन् 1994 में की गयी। यह परियोजना महिला सहकारी दुग्ध उत्पादक समितियों के माध्यम से भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास विभाग, डेयरी विकास विभाग उत्तराखंड, राष्ट्रीय महिला कोश एवं यूनिसेफ के सहयोग से चल रही है।

महिला डेयरी विकास परियोजना का मुख्यालय अल्मोड़ा में है। प्रदेश सरकार ने 2008 के अंत तक 80 नई महिला दुग्ध समितियों के गठन का निर्णय लिया है। महिला डेयरी विकास परियोजना के लिए प्रदेश सरकार ने 2008–09 के लिए 135.85 लाख रुपये का बजट प्रावधान किया है। वर्तमान में यह योजना प्रदेश के सभी जनपदों में लागू है।

महिला डेयरी विकास परियोजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

- ऐसी परिस्थिति (माहौल) तैयार करना जिससे महिलाएं स्वयं ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विकास प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी निभा सकें।
- महिलाओं को सामाजिक –आर्थिक समानता एवं सामाजिक न्याय उपलब्ध कराना।
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनुसूचित जाति /जनजाति एवं पिछड़ी जाति की गरीब महिलाओं को सामाजिक विकास की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी के योग्य बनाना।
- आर्थिक लाभ के कार्यक्रमों के साथ जोड़कर गरीब ग्रामीण महिलाओं को रोजगार उपलब्ध कराना।
- समाज के सबसे निचले स्तर पर महिलाओं में नेतृत्व एवं निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना तथा आनंद पद्धति पर सहकारी दुग्ध समिति गठित करके उन्हें ग्राम, जनपद एवं प्रदेश पर सीधे सहभागिता करने का अवसर प्रदान करना।
- ग्रामीण महिलाओं को पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय एवं चारा विकास के लिए प्रशिक्षित करना।
- ग्रामीण महिलाओं द्वारा गठित दुग्ध समितियों, विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं, विभिन्न सहकारी विकास विभागों के बीच विकास

परियोजनान्तर्गत उत्तराखंड के लक्ष्य (2004–05 से 2008–09 तक)

	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पंचम वर्ष	कुल योग
(क) कुल मिनी डेयरी की स्थापना	1350	1450	1500	1550	1600	7450
(ख) अनु. जाति/जनजाति	311	334	345	356	368	1714

रोजगार सृजन (2004–05 से 2008–09 तक)

	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पंचम वर्ष	कुल योग
(क) प्रत्यक्ष	4590	4930	5100	5270	5440	25330
(ख) अप्रत्यक्ष	505	542	561	580	598	2786
योग	5095	5472	5661	5850	6038	28116

प्रक्रिया को और तेजी से प्रभावी बनाने हेतु समन्वय स्थापित करना।

- ग्राम स्तर पर गरीबी उन्मूलन हेतु दुग्ध उत्पादकों को बिचौलियों के शोषण से बचाना।
- स्वयंसहायता समूह का गठन कर अन्य आय अर्जन कार्यक्रमों से जोड़ना।
- महिलाओं के स्वास्थ्य, जच्चा–बच्चा देखरेख हेतु जागरुकता।

सघन मिनी डेयरी परियोजना

उत्तराखण्ड के ग्रामीण अंचलों में डेयरी व्यवसाय के द्वारा पशुपालकों/दुग्ध उत्पादकों की स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप रोजगार सृजन के अवसर प्रदान कर आर्थिक सहायता हेतु सन् 2001 में सघन मिनी डेयरी परियोजना का प्रारम्भ किया गया। इस परियोजना का मुख्यालय हल्द्वानी (नैनीताल) में स्थित है। वर्तमान में यह परियोजना 13 जनपदों में कार्य कर रही है। इस योजना के सफल क्रियान्वयन से लाभार्थियों की पशुपालन व चारा विकास का नवीनतम वैज्ञानिक प्रशिक्षण के द्वारा दुग्ध उपार्जन में वृद्धि कर अधिक आय अर्जन कर स्थानीय स्तर पर ही दीर्घकालीन रोजगार सुलभ होंगे, जिससे ग्रामीण युवकों का शहर की ओर पलायन रुकेगा। प्रदेश सरकार ने सन् 2008 के अंत तक 55 सघन मिनी डेयरी यूनिटों की स्थापना करने का निर्णय लिया है।

सघन मिनी डेयरी परियोजना के मुख्य बिन्दु निम्न प्रकार हैं–

- सघन मिनी डेयरी परियोजना किसी वर्ग या जाति विशेष के लिए नहीं वरन् प्रत्येक वर्ग, जाति या धर्म का सदस्य इसका लाभ प्राप्त कर सकता है।
- इस योजना के माध्यम से दीर्घकालीन रोजगार सृजन होता है।

हरिद्वार में आंचल दूध की पैकेजिंग यूनिट

- इस योजना में सरकार सेवायोजन नहीं वरन् प्रेरक की भूमिका निभा रही है।
- यह योजना समयबद्ध कार्यक्रम है जिनके लक्ष्यों की शत्–प्रतिशत पूर्ति निर्धारित समयावधि में सुनिश्चित की जाती है।
- यह योजना विभिन्न विभागों/संस्थाओं जैसे डेयरी विकास, यू. सी. डी. एफ., पशुपालन विभाग, संस्थागत वित्त व्यावसायिक/ग्रामीण/सहकारी बैकों एवं बीमा कंपनियों के आपसी तालमेल से उपलब्ध संस्थाओं के मिश्रण का रचनात्मक उपयोग करते हुए चलायी जा रही है।

योजनान्तर्गत सुरक्षा लाभ

- योज़नान्र्तगत क्रय किए गए दो पशुओं हेतु पांच वर्ष तक का बीमा।
- योजनान्र्तगत लाभार्थी हेतु 1,00000 रुपये तक दुर्घटना बीमा पांच वर्ष हेतु।
- समन्वित डेयरी विकास योजना।

जनपद देहरादून, हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर एवं नैनीताल में दुग्ध विकास कार्यक्रम को त्वरित गति से लागू करने हेतु भारत सरकार द्वारा सन् 2002 में समन्वित डेयरी योजनान्र्तगत 19.11 करोड़ रुपये की योजना स्वीकृत की गयी थी। योजनान्र्तगत देहरादून व नैनीताल दुग्धशाला का सुदृढ़ीकरण किया गया तथा ऊधमसिंह नगर और हरिद्वार में क्रमशः 50 व 30 हजार लीटर दैनिक की क्षमता की दुग्धशाला स्थापित की गयी है। इसके अलावा 454 नयी दुग्ध समितियों का गठन, 60 बल्क मिल्क कूलर व 68 मिल्क पार्लर तथा दुग्ध समितियों में 120 मिल्को टेस्टर की स्थापना तथा तकनीकी निवेश व प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

योजना के द्वितीय चरण में जनपद टिहरी गढ़वाल, उत्तरकाशी,

अल्मोड़ा तथा पिथौरागढ़ हेतु समन्वित डेरी विकास योजना के अंर्तगत 19.95 करोड़ रुपये की योजना भारत सरकार द्वारा दी जा चुकी है।

संयुक्त उपकम का गठन

उत्तराखंड में ''आंचल'' ब्राण्ड दूध एवं दुग्ध पदार्थों की बिकी को प्रोत्साहित करने तथा दुग्ध बिकी में वृद्धि हेतु राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के उपक्रम ''मदर डेरी फुड्स लि.'' नई दिल्ली तथा उतराखंड सहकारी डेयरी फेडरेशन द्वारा ''आंचल मिल्क फूड्स लि0'' नामक संयुक्त उपक्रम का गठन किया जा चुका है। इस उपक्रम में मदर डेयरी फुड्स लि0 तथा उत्तराखंड सहकारी डेयरी फेडरेशन की भागीदारी क्रमशः 51:49 के अनुपात में है। इस उपक्रम के गठन के फलस्वरूस्प दुग्ध बिक्री में आशातीत वृद्धि हो रही है जिससे प्रदेश के दुग्ध उत्पादक व दूध उपभोक्ता लाभान्वित भी हो रहे हैं।

स्वच्छ दुग्ध उत्पादन

योजनान्र्तगत मुख्यतः दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों के सचिवों, दुग्ध उत्पादकों व विभिन्न पदाधिकारियों तथा विभागीय पदाधिकारियों को स्वच्छ दूध उत्पादन किए जाने हेतु प्रेरित व प्रशिक्षित किया जा रहा है। यह योजना सन् 2001 में प्रारंभ की गयी थी तथा यह योजना सभी जनपदों में क्रियान्वित की जा चुकी है।

चारा बैंक की स्थापना

विशेष रूप से दुग्ध उत्पादन व्यवसाय को सफल बनाने में हरे चारे का विशेष महत्व है। उत्तराखंड़ में दुधारू पशुओं का दुग्ध उत्पादन औसतन कम है जिसका मुख्य कारण दुधारू पशुओं को आवश्यकतानुसार वर्ष भर पौष्टिक चारे का न मिलना है। चारा बैंक के प्रथम चरण में पशु आहार निर्माणशाला रूद्रपुर (ऊधमसिंह नगर) की स्थापना की गयी। प्रदेश सरकार ने चारा विकास के लिए निम्न कार्य किए हैं–

- प्रत्येक विकासखंड में चारा बैंक स्थापित करने के लिए 546 लाख रुपये की धनराशि स्वीकृत की गई है।
- पंतनगर, श्यामपुर (देहरादून) में चारा बैंक की स्थापना करने का निर्णय भी लिया गया है।

निष्कर्ष

उत्तराखंड में डेयरी उद्योग प्रगति की ओर उन्मुख है। प्रदेश सरकार ने जो उपक्रम क्रियान्वित किये हैं वे सभी आशा के अनुरूप कार्य कर रहे हैं जिससे राज्य में दूध उत्पादकों में आर्थिक, सामाजिक एवं नेतृत्व क्षमता का विकास हो रहा है। प्रदेश सरकार के योजना के सफल कियान्वयन से उत्तम नवीनतम तकनीकी प्रशिक्षण के द्वारा दुग्ध उत्पादन में वृद्धि से अधिक लाभ अर्जित कर स्थानीय स्तर पर ही दीर्घकालीन अवधि के लिए रोजगार की संभावनाएं बढ़ी है व ग्रामीण युवकों का शहर की ओर पलायन रोकने में भी मदद मिल रही है। डेयरी उद्योग में प्रदेश की महिलाओं की सक्रिय भागीदारी देखी जा सकती है। महिला दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों का गठन कर एक प्रासंगिक मंच बनाया गया जिससे महिलाएं अपने आप पहचानने में सक्षम हो सकें। इन समितियों के माध्यम से बिचौलियों के शोषण से मुक्ति के साथ–साथ दुग्ध व्यवसाय से इन महिलाओं की आय बढ़ी है। साथ ही सामाजिक रूप से भी महिलाओं का उन्नयन हुआ है। महिला डेयरी विकास द्वारा आयोजित विभिन्न प्रशिक्षणों में ये महिलाएं न केवल बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रही हैं वरन् प्राप्त ज्ञान का सदुपयोग भी वे अपने ग्राम क्षेत्रों में कर रही हैं।

उत्तराखंड में डेयरी उद्योग से लगभग 1.5 लाख लोगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष माध्यम से रोजगार मिल रहा है। प्रदेश में प्रतिवर्ष लगभग 8 लाख मीट्रिक टन दूध का उत्पादन किया जा रहा है जिससे 1500 करोड़ रुपये की प्राप्ति हो रही है। सरकार के विभिन्न उपक्रमों के माध्यम से जहां राज्य के उपभोक्ताओं को वर्षभर तरल दूध एवं दुग्ध पदार्थ की आवश्यकतानुसार पूर्ति हो रही है वहीं ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों को उनके द्वारा उत्पादित दूध का समुचित मूल्य उन्हें ग्राम स्तर पर बैंकों के माध्यम से दुग्ध समितियों द्वारा दिलाया जाता है। इतना ही नहीं सघन मिनी डेरी योजना के अंर्तगत पशुओं के बीमा का भी प्रावधान है जो एक सराहनीय कदम कहा जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उत्तराखंड में डेयरी विकास की दशा सकारात्मक सोच से कार्य कर रही है।

(लेखक श्री अ0प्र0ब0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अगत्स्यमुनि (रूद्रप्रयाग) में राजनीति विज्ञान के प्रवक्ता हैं)

उत्तर प्रदेश में डेयरी उद्योग का अवलोकन

डॉ. नरेश चन्द त्रिपाठी

दुग्ध उत्पादन में वृद्धि एवं डेयरी उद्योग का विकास एक तरफ राष्ट्रीय स्वास्थ्य में सुधार हेतु उपयोगी है, वहीं दूसरी ओर कृषि के पूरक धंधे के रूप में ग्रामीण बेरोजगारी पर प्रहार करने एवं कृषकों की आय में वृद्धि करने का सशक्त माध्यम भी है। दुग्ध उद्योग की इसी दोहरी महत्ता को देखते हुए भारत में श्वेत क्रांति के रूप में दुग्ध उत्पादन को बढ़ाने के क्रान्तिकारी प्रयास प्रारंभ हुए। हरित क्रांति की तर्ज पर 1965–66 में दुग्ध उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए संपूर्ण देश में आनंद पद्धति पर दुग्ध उत्पादन वृद्धि हेतु प्रयास प्रारंभ किए गए। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड और इंडियन डेयरी कार्पोरेशन नामक शीर्ष संस्थाएं स्थापित की गयी। पशुओं की नस्ल सुधार, चारे एवं आहार की उत्तम व्यवस्था, दुधारू पशु खरीद हेतु ऋण की व्यवस्था, सहकारी आधार पर दुग्ध विपणन की व्यवस्था करने, सहकारी समितियों की स्थापना करने जैसे अनेक कार्यक्रमों को एक साथ प्रारंभ किया गया और इस संपूर्ण पद्धति को 'आपरेशन फ्लड' का नाम दिया गया। यह परियोजना भारत में 1970 में प्रारंभ की गयी।

सम्पूर्ण विश्व में भारत में पशुओं की संख्या सर्वाधिक है और दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान है। उसी प्रकार उत्तर प्रदेश भारत में सर्वाधिक दुग्ध उत्पादक राज्य है तथा यहां दुधारू पशुओं की भी संख्या सर्वाधिक है। वर्ष 2006–07 में देश का दूध उत्पादन 10 करोड़ 90 लाख टन रहा। 1998 की पशुगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में 200.16 लाख गोवंशीय तथा 189.96 लाख महिषवंशीय पशु थे। उत्तर प्रदेश में प्रति गाय औसतन 3.025 किलोग्राम तथा प्रति भैंस औसतन 4.25 किलोग्राम दुग्ध उत्पादन होता है।

उत्तर प्रदेश में लघु एवं सीमान्त कृषकों के हित संवर्द्धन हेतु विशेष रूप से डेयरी उद्योग को प्रोत्साहित करने हेतु कदम उठाये गये। उत्तर प्रदेश में आपरेशन फ्लड योजना भारत सरकार के सौजन्य से 1970–71 में प्रदेश के 8 जनपदों मेरठ, मुज्जफरनगर, गाजियाबाद, बुलंदशहर, वाराणसी, गाजीपुर, बलिया एवं मिर्जापुर में प्रस्तावित की गयी। योजना के संचालन का दायित्व प्रादेशिक कोआपरेटिव डेयरी फेडरेशन को सौंपा गया। वास्तविक रूप से योजनाएं इन जिलों में 1973 में आंशिक रूप से प्रारम्भ हुई। इसी दौरान 1976 में राज्य दुग्ध परिषद का गठन एक नियमित निकाय के रूप में हुआ। इससे पूर्व दुग्ध उत्पादन एवं विकास विभाग सहकारिता विभाग के अधीन था।

विश्व बैंक तथा ई.ई.सी. देशों की सहायता से 2 अक्टूबर, 1979 से देश में आपरेशन फ्लड द्वितीय कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। उत्तर प्रदेश में 1982 से आपरेशन फ्लड द्वितीय योजना लागू हुई। कार्यक्रम को लागू करने के लिए त्रिस्तरीय सहकारी समितियां गठित की गई। इस योजना का लक्ष्य दुग्ध उत्पादकों को मध्यस्थों के शोषण से मुक्त कराना एवं सीधे समिति के माध्यम से दुग्ध उपार्जन करना, कृत्रिम गर्भाधान, पशु स्वास्थ्य रक्षा, पोषक आहार की वृद्धि द्वारा दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करना था। योजना में 28 जनपद आच्छादित किए गए। यह कार्यक्रम 1987–88 तक संचालित किया गया। इसी प्रकार आपरेशन फ्लड तृतीय कार्यक्रम प्रदेश में 1996–97 तक चला।

पर्वतीय और पिछड़े क्षेत्रों में गैर–आपरेशन फ्लड डेयरी विकास परियोजनाएं आठवीं योजना में प्रारंभ की गयी। दसवीं पंचवर्षीय योजना में 175 करोड़ रुपये परिव्यय के साथ भारत में इसे जारी रखा गया है। 31 मार्च, 2005 तक विभिन्न केंद्र द्वारा राज्यों को 334.71 करोड़ रुपये जारी किए गए और 164 जिलों में परियोजनाएं चलाई गई। इससे संपूर्ण भारत में 7.12 लाख परिवार लाभान्वित हुए और लगभग 11,600 ग्राम स्तरीय डेयरी समितियां गठित की गई। उत्तर प्रदेश में गैर–आपरेशन फ्लड योजना के क्रियान्वयन हेतु पी.सी.डी.एफ. को एकल क्रियान्वयन एजेंसी घोषित किया गया है। वर्तमान समय में पी.सी.डी.एफ. द्वारा 37 दुग्ध संघों का संचालन किया जा रहा है। 1991–92 में उत्तर प्रदेश में सहकारी क्षेत्र में लगभग 2 लाख लीटर दुग्ध उपार्जन होता था जो 2003–04 में बढ़कर 14.5 लाख लीटर प्रति दिन हो गया। इस प्रकार पी.सी.डी.एफ. के प्रयासों से 12 वर्षों में 7 गुना से अधिक की वृद्धि हुई। उत्तर प्रदेश में सहकारी दुग्ध समितियों की प्रगति तालिका में प्रस्तुत की गई है। वर्ष 2005–06 में समितियों की संख्या 15,005 हो गई थी, जिसके द्वारा प्रतिदिन 8.26 लाख किग्रा दूध उपार्जित किया जाता है।

कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उपलब्धियां

कार्यरत दुग्ध समितियां (संख्या)	2002–03		2003–04		2004–05	
	लक्ष्य 13647	उपलब्धि 12859	लक्ष्य 14093	उपलब्धि 14375	लक्ष्य 14543	उपलब्धि 15722
दुग्ध उपार्जन (लाख ली0 प्रतिदिन)	7.46	7.32	8.03	8.93	8.56	10.68
सदस्यता (लाख में)	–	–	7.80	7.31	7.94	7.57

एकीकृत दुग्धशाला विकास परियोजना

वर्ष 1993–94 से प्रदेश के विभिन्न जनपदों में एकीकृत दुग्धशाला विकास परियोजना संचालित की जा रही है। यह योजना भारत सरकार से अनुदान के रूप में शत–प्रतिशत वित्त पोषित है। इसका उद्देश्य दुग्ध उत्पादन में वृद्धि, रोजगार सृजन, दुग्ध उपार्जन, दुग्ध प्रक्रिया एवं दुग्ध विपणन में सुधार करना है। इस योजना को प्रदेश में विभिन्न चरणों – फेज 1,2,3,4,5,6, के रूप में चलाया जा रहा है। योजनान्तर्गत फेज–एक में उरई, चित्रकूट तथा हमीरपुर के लिए 459.93 लाख रुपये, फेज द्वितीय में पूर्वांचल के गोरखपुर, बस्ती, देवरिया एवं आजमगढ़ के लिए 468.49 लाख रुपए तथा फेज– तीन के अन्तर्गत तराई के जनपद गोण्डा, बहराइच एवं लखीमपुर के लिए 314.27 लाख रुपये प्रदान किए गए। माह नवम्बर 2004 तक की प्रगति रिपोर्ट के अनुसार इन तीनों चरणों में आच्छादित जनपदों की 1444 कार्यरत दुग्ध समितियों द्वारा 42942 किलोग्राम दूध दैनिक रूप से उपर्जित किया जा रहा है।

इसी योजनान्तर्गत फेज–4 में मऊ, महराजगंज एवं झांसी जनपद को फेज–5 में बरेली, शाहजहांपुर पीलीभीत एवं रामपुर के तथा फेज–6 में जनपद प्रतापगढ़ को आच्छादित किया गया है।

उत्तर प्रदेश में दुग्ध उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए भारत–नेपाल के सीमावर्ती चार जनपदों पीलीभीत, लखीमपुर खीरी, बलरामपुर एवं सिद्धार्थनगर में भारत सरकार की वित्तीय सहायता से बार्डर एरिया डेवलपमेंट प्रोग्राम भी चलाया जा रहा है। इस योजनांतर्गत दुग्ध संघों को दुग्ध वाहनों के लिए वित्त पोषण एवं दुग्ध समितियों को वित्तीय सहायता दी जाती है।

महिलाओं को दुग्ध उत्पादन से जोड़ने, उनकी सहभागिता बढ़ाने एवं महिला सशक्तीकरण हेतु 1996–97 से महिला डेयरी योजना भी प्रदेश में प्रारंभ की गयी है। इसके अन्तर्गत महिलाओं को दुग्ध उत्पादन की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी एवं प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है। इस योजना के निमित्त 2004–05 में 5.01 लाख रुपए का बजटीय प्रावधान किया गया।

उत्तर प्रदेश में दुग्ध गतिविधियों के क्षेत्र में एक अन्य उल्लेखनीय कार्यक्रम – 'स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान' संचालित है, जिसका उद्देश्य दुग्ध उत्पादन में अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों की भागीदारी बढ़ाना है। इस निमित्त उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना के लिए प्रदेश सरकार ने 2004–05 के बजट में 242.88 लाख रुपए का प्रावधान किया।

इस प्रकार उत्तर प्रदेश को देश में सर्वाधिक दूध उत्पादित करने वाले राज्य के रूप में प्रतिष्ठित रखने और अग्रणी बनाने हेतु प्रदेश सरकार एवं भारत सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। इस क्षेत्र में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों का दायित्व है कि वे पूर्ण निष्ठा एवं ईमानदारी से योजनाओं को क्रियान्वित करें ताकि प्रदेश में सही अर्थों में श्वेत क्रांति हो सके।

(लेखक रामनगर (उत्तर प्रदेश), स्नातकोत्तर महाविद्यालय में अर्थशास्त्र विभाग में रीडर हैं।)

ई–मेल : nareshtripathi@rediff.com

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का (जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

राजस्थान में डेयरी उद्योग एवं सहकारिता

सीमा सोनी

भारत में स्वतंत्रता के छः दशकों के पश्चात् स्वतः स्फूर्त, सतत् प्रयासी, आर्थिक विनियोजन एवं सरकार के पूर्ण सहयोग के फलस्वरूप सहकारी क्षेत्र अर्थव्यवस्था का शक्तिशाली स्तम्भ बन कर उभरा है। विभिन्न प्रकार की सहकारिताएं न केवल संख्या में ही बढ़ी है वरन् वे अपने सदस्यों को भी सेवाएं प्रदान कर रही हैं। सहकारिता का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक न्याय के माध्यम से आर्थिक विकास करने का रहा है। सहकारिता का अधिकतम विकास तभी हो सकता था जबकि इसे भारत सरकार एवं राज्य सरकारों से सहायता मिलती रहे तथा राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, नाबार्ड, भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ द्वारा इसके संवर्द्धन की भूमिका का यथोचित निर्वाह हो।

श्वेत क्रांति

देश में दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए 1970 से श्वेत क्रान्ति प्रारम्भ की गई, जिसे ऑपरेशन फ्लड प्रथम का नाम दिया गया। देश के 10 चयनित राज्यों में राजस्थान भी एक था। राज्य में 1970 में प्रथम चरण को क्रियान्वित किया गया। देश में 117 करोड़ रुपये डेयरी विकास पर खर्च किए गए। इसका उद्देश्य मुख्य रूप से दुग्ध व दुग्ध से बने पदार्थों का शहरी क्षेत्र में खपत बढ़ाना व उचित कीमत दिलाना था।

1975 में राजस्थान राज्य डेयरी विकास निगम की स्थापना की गई। इसके साथ ही राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन की भी स्थापना की गई है। यह फेडरेशन ग्रामीण दुग्ध उत्पादकों से दुग्ध सहकारी समितियों के माध्यम से दुग्ध संग्रहण का कार्य करती है। संग्रहित दुग्ध को संकलित करने तथा भण्डारण करने के लिए डेयरी संयंत्रों तथा अवशीतन केन्द्रों की स्थापना का भी कार्य प्रारम्भ हुआ। डेयरी फेडरेशन उपभोक्ताओं को अच्छा दुग्ध व दुग्ध से निर्मित सामग्री उपलब्ध कराने, पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार लाने, पशु आहार की पूर्ति बढ़ाने व दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य दिलाने का कार्य कर रहा है। श्वेत क्रांति का दूसरा चरण 1978 में लागू किया गया। राज्य में इस चरण का आरम्भ विश्व बैंक के सहयोग से 1980 के बाद गति पकड़ पाया। इसमें डेयरी क्षेत्र की उत्पादन क्षमता में सुधार के विभिन्न कार्यक्रम बना कर क्रियान्वित किए गए। राजस्थान में विश्व बैंक की सहायता से डेयरी विकास कार्यक्रम राज्य के 6 जिलों में राजस्थान डेयरी विकास निगम की देखरेख में चलाया जा रहा है। श्वेत क्रान्ति का तीसरा चरण सातवीं योजना में चलाया गया जो 1994 से समाप्त हो गया। इसका प्रमुख उद्देश्य ढांचे की स्थापना व उत्पादकता में स्थायी सुधार थे। गुजरात की आनन्द डेयरी के अनुभवों के आधार पर डेयरी विकास का कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है। राज्य में ऑपरेशन फ्लड को राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन द्वारा संचालित किया गया जिसका आधार प्राथमिक दुग्ध सहकारी समितियां हैं। जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ इस संस्था के सदस्य होते हैं।

राजस्थान में डेयरी विकास की वर्तमान स्थिति

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक उत्थान, उपभोक्ताओं को अच्छे किस्म का दूध व दूध सामग्री उपलब्ध करवाने, दूध उत्पादकों को दूध का उचित मूल्य दिलाने तथा दुधारू पशुओं के समन्वित विकास के उद्देश्यों से राजस्थान सहकारी डेयरी संघ लि. राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के सहयोग से सहकारिता के आधार पर राज्य के डेयरी संघ के नेतृत्व में राजस्थान में सघन डेयरी विकास कार्यक्रम चला रहा है। राज्य के सभी जिलों में 16 दूध उत्पादक संघों के माध्यम से कार्यक्रम चलाया जा रहा है। 2005–06 के दौरान 592 नई दुग्ध उत्पादक समितियां गठित की गई तथा 462 बंद पड़ी समितियों को पुनर्जीवित किया गया।

अधिक दूध उत्पादन के लिए पौष्टिक चारा जरूरी

परिणामस्वरूप दिसम्बर 2005 तक कुल कार्यशील समितियों की संख्या 8475 थी और वर्ष के दौरान बीस हजार नए सदस्यों के जुड़ने से दुग्ध सहकारी समितियों की कुल सदस्य संख्या 5.8 लाख हो गई। वर्ष 2005–06 के दौरान प्रतिदिन औसतन 14.76 लाख लीटर दूध का संकलन किया जा रहा था।

राजस्थान में वर्तमान में 14 डेयरी संयंत्र तथा 25 अवशीतन केन्द्र कार्यरत हैं और 14 संयंत्रों की दूध विदोहन क्षमता 13.45 लाख लीटर प्रतिदिन है जबकि 25 अवशीतन केन्द्रों की दूध अवशीतन क्षमता भी 4.8 लाख लीटर प्रतिदिन है।

राजस्थान में डेयरी के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों में आमदनी व रोजगार में वृद्धि हुई है। लघु व सीमान्त कृषकों तथा भूमिहीन श्रमिकों को आर्थिक लाभ पहुंचा है। शहरी क्षेत्रों में दुग्ध व दुग्ध से बने पदार्थों की बढ़ी हुई मांग की पूर्ति करने में मदद मिली है। दूध का उत्पादन पिछले 40 वर्षों में चार गुना से अधिक हो गया। महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए स्वंतत्र महिला दुग्ध उत्पादन सहकारी समितियों के गठन पर विशेष ध्यान दिया है। यह योजना राज्य के 9 जिलों– जयुपर, जोधपुर, पाली, अजमेर, भीलवाड़ा, बांसवाड़ा, बीकानेर, भरतपुर व सीकर में चलाई गई। वर्ष 2002–03 में राज्य में 1281 महिला सहकारी समितियां प्रभावी ढंग से कार्य कर रही थीं। जयपुर जिले के नायला गांव में अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के आगमन पर नायला दुग्ध उत्पादन इकाई को पूर्णरूप से कम्प्यूटराइज कर दिया गया था जो राज्य सरकार की महत्वपूर्ण उपलब्धि रही।

चारा विकास कार्यक्रम

दुग्ध उत्पादक संवर्द्धन हेतु पशु पोषण में पौष्टिक चारा उपलब्ध कराये जाने के उद्देश्य से फेडरेशन निरन्तर उन्नत चारा विकास कार्यक्रम को पर्याप्त महत्व प्रदान करता रहा है इसके अंतर्गत :

- फेडरेशन अपने रोजड़ी, बस्सी एवं पाल कृषि फार्मों पर चारे की प्रमुख किस्में व उन्नत किस्म का चारा बीज उत्पादन कर दुग्ध उत्पादकों को उपलब्ध कराता है।
- वर्ष 2004–05 में 6092 क्विंटल एवं वर्ष 2005–06 में 6528 क्विंटल चारा बीज का वितरण किया गया।
- किसानों में चारा बीज उत्पादन में रूचि जागृत करने एवं उचित मूल्य पर चारा बीज उपलब्ध कराने के उद्देश्य से किसानों के खेतों में ही चारा बीज उत्पादन कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया है जिसके अन्तर्गत फेडरेशन द्वारा रिजका, बरसीम, ग्वार व ओट के उन्नत बीज उत्पादन हेतु उपलब्ध कराया गया।

पशु नस्ल संवर्द्धन कार्यक्रम

दुग्ध उत्पादन संवर्द्धन, बिना स्थानीय पशु नस्ल सुधार एवं संवर्द्धन के सम्भव नहीं है। इसकी महत्ता के मद्देनजर पशु नस्ल संवर्द्धन की प्राप्ति हेतु फ्रोजन सीमन बैंक, बस्सी स्थित उन्नत नस्ल के विदेशी सांडों के हिमीकृत वीर्य से कृत्रिम गर्भाधान कार्यक्रम चलाया जा रहा है तथा जहां कृत्रिम गर्भाधान सम्भव नहीं है वहां प्राकृतिक गर्भाधान हेतु सांड वितरण की व्यवस्था की गई है।

पशु स्वास्थ्य सेवा

डेयरी विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत पशुपालकों को प्राथमिक पशु चिकित्सा सेवा समिति स्तर पर नियमित रूप से प्रदान किये जाने की व्यवस्था जिला दुग्ध संघों के माध्यम से की जाती है। वर्ष 2004–05 में 6172 समितियों पर सुविधा उपलब्ध कराकर 9.33 लाख एवं वर्ष 2005–06 में 9.88 लाख पशुओं का उपचार किया गया।

सीमन बैंक एवं विदेशी पशु प्रजनन फार्म

बस्सी (जयपुर) में राज्य का एकमात्र हिमीकृत वीर्य उत्पादन केन्द्र फ्रोजन सीमन बैंक एवं विदेशी पशु प्रजनन फार्म स्थित है जहां से राज्य के पशुपालन विभाग एवं जिला दुग्ध संघों को उन्त नस्ल के सांडों का हिमीकृत वीर्य विपणन कर राज्य की लगभग 90 प्रतिशत मांग की आपूर्ति की जाती है। वर्ष 2004–05 में 11.40 लाख हिमीकृत वीर्य डोजेज आपूर्ति की तुलना में 2005–06 में 14.20 लाख हिमीकृत वीर्य डोजेज की आपूर्ति की गई। फ्रोजन सीमन बैंक, बस्सी को वर्ष 2005–2006 में भारत सरकार द्वारा 'बी' श्रेणी में वर्गीकृत किया गया एवं वर्ष 2006–07 में गुणवत्ता की दिशा में एक ओर कदम बढ़ाते हुए भारतीय मानक संस्थान से आईएसएस प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया गया है।

सरस सुरक्षा कवच योजना

फेडरेशन द्वारा प्रतिवर्ष विभिन्न चरणों में सरस सामूहिक बीमा योजना "सरस सुरक्षा कवच" का क्रियान्वयन दुग्ध संघों के माध्यम से किया जा रहा है। जिसके अन्तर्गत दुग्ध सहकारी समितियों के पंजीकृत सदस्यों को जीवन बीमा, दुर्घटना बीमा कराकर लाभान्वित किया जा रहा है। वर्ष 2004–05 के द्वितीय चरण में 123000 सदस्यों को बीमा सुरक्षा प्रदान की गई तथा वर्ष 2005–06 के तृतीय चरण में 1.03 लाख दुग्ध उत्पादक सदस्यों को लाभान्वित किया गया है। इस बीमा योजना में सदस्यों के बीमा प्रीमियम की 12.5 प्रतिशत राशि फेडरेशन द्वारा वहन की जा रही है तथा बी. पी.एल. परिवारों/महिलाओं/अनुसूचित जाति/ जनजाति के सदस्यों के लिए यह राशि 20 प्रतिशत होगी।

सरस सामूहिक आरोग्य बीमा योजना

आरसीडीएफ द्वारा सरस सामूहिक आरोग्य बीमा योजना जो कि दुग्ध उत्पादकों के लिए एक ग्रामीण स्वास्थ्य बीमा योजना है, के प्रथम चरण का वर्ष 2005–06 में शुभारम्भ किया गया था। प्रथम चरण में मार्च, 2006 तक 81,977 सदस्यों का योजनान्तर्गत बीमा करवाया गया। प्रथम चरण में व्यक्तिगत सदस्य के लिए बीमा प्रीमियम रुपये 325 प्रति सदस्य प्रति वर्ष एवं परिवार (2+2) के लिए वार्षिक प्रीमियम 350 रुपये था। आरसीडीएफ द्वारा प्रीमियम का 12.50 प्रतिशत अंशदान वहन किया गया है।

महिला डेयरी परियोजना

महिला एवं बाल विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, के 'स्टेप' कार्यक्रमान्तर्गत महिलाओं में नेतृत्व क्षमता का विकास एवं उन्हें आत्मनिर्भर बनाकर पशुपालन के माध्यम से अतिरिक्त धनार्जन द्वारा पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति बेहतर बनाने के लिए वर्ष 1992–93 से अब तक 8 चरणों में राजस्थान के 20 जिलों में महिला डेयरी परियोजना का संचालन किया गया। वर्ष 2004–05 में 214 महिला दुग्ध समितियों के माध्यम से 1,30,000 महिला सदस्यों को दुग्ध विकास से लाभान्वित किया गया। वर्ष 2005–06 तक कुल 2552 महिला दुग्ध समितियों का पंजीयन करवाकर 1,50,000 महिलाओं को समितियों से जोड़ा गया है। योजना के 9वें व 10वें चरण में राज्य में झालावाड़, बूंदी, झूंझुनू, बारां, करौली व सिरोही जिलों में भी महिला डेयरी परियोजना विचाराधीन है।

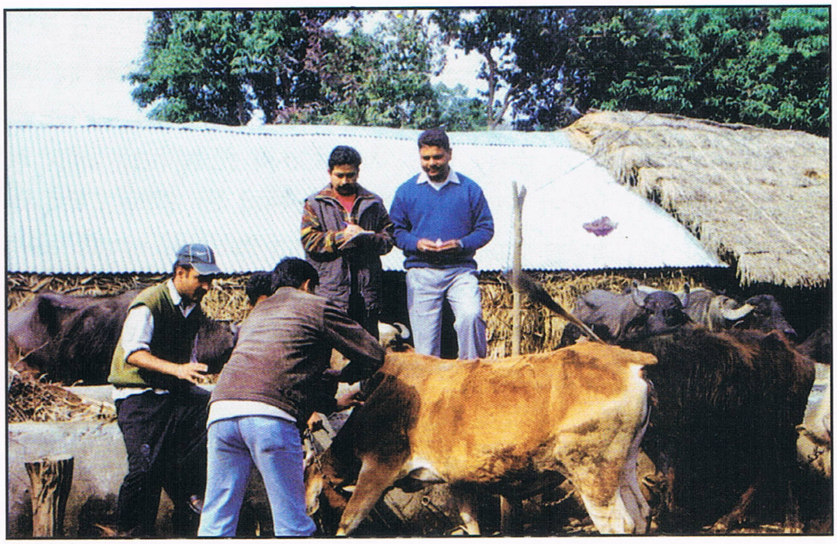

पशुओं का उपचार करते पशु चिकित्सक

समिति स्तर पर दुग्ध संकलन में पारदर्शिता

ग्रामीण दुग्ध समिति स्तर पर दुग्ध उत्पादक सदस्यों के हित संरक्षण एवं उनमें दुग्ध सहकारिता के प्रति विश्वास उत्पन्न करने के उद्देश्य से दुग्ध समिति स्तर पर कम्प्यूटरीकृत दुग्ध परीक्षण यंत्र स्थापित किये जाने का कार्य निरन्तर प्रगति पर है। जिसके अन्तर्गत वर्ष 2004–05 में 7016 पर कम्प्यूटरीकृत दुग्ध परीक्षण यंत्र स्थापित किए गए जिनकी संख्या वर्ष 2005–06 के अंत तक बढ़कर 8369 हो गई है। वर्ष 2006–07 में यह संख्या बढ़कर 9071 पहुंच चुकी है। इस प्रकार समिति स्तर पर दुग्ध उत्पादकों के विश्वास में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है।

समिति स्तर पर कच्चे दूध की गुणवत्ता में सुधार

कच्चे दूध की गुणवत्ता में और अधिक सुधार हेतु समस्त जिला दुग्ध संघों में स्वच्छ दूध उत्पादन अभियान चलाया जा रहा है। कार्ययोजना के अनुरूप समस्त जिला दुग्ध संघ अपने क्षेत्र के दुग्ध उत्पादकों में व्यक्तिगत स्वच्छता, पशुधन के स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, दूध निकालने वाले बर्तनों की सफाई एवं दूध के बर्तन को ढककर लाने के सम्बंध में जागरुकता उत्पन्न कर दुग्ध समिति स्तर पर तिरपाल से दुग्ध केनों को ढककर लाने हेतु व्यवस्था सुनिश्चित करते हैं। कई दुग्ध संघों में चयनित समितियों में बल्क मिल्क कूलर्स की स्थापना की जा रही है। जिसके फलस्वरूप कच्चे दूध को अतिशीघ्र ठण्डा किया जाकर टैंकर के माध्यम से सम्बंधित संयंत्रों में भेजा जाता है, इससे दुग्ध की गुणवत्ता बनाये रखने में सफलता मिली है।

जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना

विश्व बैंक प्रायोजित गरीबी उन्मूलन परियोजना के क्रियान्वयन में सहयोग का दायित्व राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन को सौंपा गया है। इस परियोजना का क्रियान्वयन जिला दूध संघों के माध्यम से बारां, चूरू, दौसा, धौलपुर, झालावाड़, टोंक, राजसमन्द एवं बीकानेर जिले की डूंगरगढ़ तहसील क्षेत्र में किया जा रहा है। परियोजना का प्रमुख उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों के समान रुचि समूह गठित कर उन्हें दूध व्यवसाय के माध्यम से रोजगार उपलब्ध कराना है। वर्ष 2005–06 तक 23 हजार बी.पी.एल. परिवारों को लाभान्वित किया गया था। जिनकी संख्या बढ़कर वर्ष 2006–07 (फरवरी, 07) तक 25,650

हो गई। परियोजनान्तर्गत फरवरी, 2007 तक 32,329 दुधारू जानवर समान रुचि समूहों द्वारा क्रय किये गये हैं।

स्वच्छ दूध उत्पादन योजना

राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन भारत सरकार के सहयोग से अजमेर, भीलवाड़ा, जोधपुर, श्रीगंगानगर, जयपुर, बूंदी (कोटा), उदयपुर, अलवर, चुरू एवं पाली जिलों में स्वच्छ दूध उत्पादन परियोजना चला रही है। इस परियोजनान्तर्गत 41,600 दूध उत्पादकों को स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए प्रेरित व प्रशिक्षित करने का लक्ष्य है एवं 132 बल्क मिल्क कूलर्स समिति स्तर पर स्थापित किये जाने हैं। योजना की कुल राशि 940.385 लाख रुपये है। मार्च, 2007 तक भारत सरकार द्वारा 376.975 लाख रुपये राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन को उपलब्ध करा दिये गये हैं।

सघन डेयरी विकास परियोजना

राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन भारत द्वारा सरकार के सहयोग से सघन डेयरी विकास परियोजना राजस्थान के 6 जिलों क्रमशः झालावाड़, चित्तौड़गड, बारां, राजसमंद, चुरू एवं श्रीगंगानगर में चलाई जा रही है। परियोजनान्तर्गत 20 हजार लीटर प्रति दिन दूध विधायन क्षमता के दूध संयंत्र इन सभी स्थानों पर लगाये जाने हैं। परियोजना की कुल राशि 1744.60 लाख रुपये है।

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

भारत सरकार द्वारा संचालित इस योजना का मुख्य उद्देश्य बी. पी.एल. परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। योजना का क्रियान्वयन सीकर, भरतपुर, बीकानेर एवं अजमेर जिलों में किया जा रहा है, इन जिलों के लिए 4329.94 लाख रुपये की परियोजनायें स्वीकृत हो चुकी हैं। परियोजना क्रियान्वयन के अन्तर्गत सीकर जिले में 60 हजार लीटर दूध विधायन क्षमता का संयंत्र स्थापित हो चुका है। परियोजनाओं के अन्तर्गत दूध समितियों के माध्यम से ए.एम.सी.एस., ई.एम.टी. बल्क कूलर्स व पशु शेड लगाये जाने का प्रावधान है। गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले लाभार्थियों के लिए दुधारू पशु क्रय करवाये जाने का भी प्रावधान है।

राजस्थान में डेयरी उद्योग का विकास एक आर्थिक अनिवार्यता है। राजस्थान में भारत के पशु धन का लगभग 11.2 प्रतिशत भाग है। 2003 की पशुगणना के अनुसार राजस्थान में 108.53 लाख गायें तथा बैल और 92.88 लाख भैंसें हैं और इस दृष्टि से राज्य का भारत में छठा स्थान है। राजस्थान में पिछले 55 वर्षों में दूध का उत्पादन पांच गुना हो गया है। पहले 30 वर्षों में यह दुगुने से अधिक हो गया था। राजस्थान में सबसे अधिक दूध उत्पादन जयपुर, दौसा, राजसमंद, गंगानगर, जोधपुर, उदयपुर, अलवर, बीकानेर, भरतपुर, धौलपुर, भीलवाड़ा, अजमेर, बारां व कोटा में होता है।

राजस्थान में डेयरी विकास कार्यक्रम सहकारिता आधार पर चलाया जा रहा है। इसके अन्तर्गत वर्तमान में 6779 प्राथमिक दूध सहकारी समितियां पंजीकृत हैं जो जिला दूध संघ से सम्बद्ध हैं। वर्तमान में राज्य में 16 जिला दूध संघ कार्यरत हैं तथा राज्य स्तर पर ये संघ शीर्षस्थ संस्था राजस्थान कॉआपरेटिव डेयरी फेडरेशन से सम्बद्ध हैं।

वर्तमान में सहकारिता आधारित दूध विकास कार्यक्रम से 4.81 लाख से भी अधिक उत्पादक लाभान्वित हो रहे हैं। राजस्थान में सहकारी डेयरी फेडरेशन के तत्वाधान में कार्यरत डेयरियां जहां एक ओर लगभग 3000 व्यक्तियों को सीधा रोजगार उपलब्ध करवा रही हैं, वहीं दूसरी और ग्राम–स्तरीय सहकारी समितियों के माध्यम से लगभग 10,000 व्यक्तियों को अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिल रहा है। 1281 महिला डेयरी समितियों के माध्यम से महिलाओं को स्वावलम्बी बनाने हेतु स्वयंसेवी संघों का भी गठन किया गया है।

उत्तरी राजस्थान दूध उत्पादन संघ लिमिटेड, जो उरमूल के नाम से प्रसिद्ध है, की स्थापना 28 अगस्त, 1972 को सहकारी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत एक पंजीकृत सहकारी संस्था के रूप में हुई थी। इसकी स्थापना के समय बीकानेर, श्रीगंगानगर व चुरू जिले इसके अन्तर्गत आते थे। नवें दशक के मध्य में चूरू व श्रीगंगानगर जिले के अलग दूध संघ बन गए। उरमूल ने अपना व्यापार 9 जुलाई, 1973 से प्रारम्भ किया। उस समय उसकी दूध संग्रहण क्षमता 1500 लीटर प्रतिदिन थी। ग्रामीण किसानों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से स्थापित उरमूल क्षेत्र में दूध उत्पादकों को अधिकतम संरक्षण मूल्य चुकाता है। प्रत्येक एक रुपया जो उरमूल द्वारा कमाया जाता है, में से 75 पैसे दूध उत्पादक किसानों को चुकाये जाते हैं। उरमूल का बीकानेर डेयरी संयंत्र 26 जनवरी, 1977 से आरम्भ हुआ, तभी से यह संयंत्र अथाह दूध संग्रहण व वितरण कर रहा है। यह हरित क्रांति से श्वेत क्रांति की तरफ बढ़ने में मील का पत्थर साबित हुआ है।

उरमूल द्वारा संचालित विभिन्न गतिविधियां

कृषक संगठन गतिविधियां

उरमूल द्वारा वर्ष 2006–07 के दौरान 15 नई दूध उत्पादक सहकारी समितियां संघ की सदस्य बनाई गई हैं एवं इस वर्ष

जनवरी 2008 तक 35 समितियां पंजीकृत हुई हैं। वर्ष 2007–08 में (जनवरी, 08 तक) संघ में 689 दूध उत्पादक सहकारी समितियां पंजीकृत हैं एवं 354 दूध उत्पादक सहकारी समितियां प्रस्तावित हैं।

दूध संकलन

संघ क्षेत्र में विषम भौगोलिक परिस्थितियों एवं निजी दूध व्यवसायियों से कड़ी प्रतिस्पर्धा के बावजूद उरमूल से सम्बद्ध 373 दूध उत्पादक सहकारी समितियां कार्यशील हैं जिनके माध्यम से वर्ष 2006–07 में औसत दूध संकलन 57,060 किलो प्रतिदिन रहा है। वर्तमान में संघ द्वारा औसत दूध संकलन 81,000 किलोग्राम प्रतिदिन किया जा रहा है।

समिति आधुनिकीकरण

दूध उत्पादक सहकारी समितियों की कार्य प्रणाली में सुधार एवं पारदर्शिता लाने के लिए समिति स्तर पर ई.एम.टी. एवं मिल्को स्टेशन स्थापित किये जाने से दूध संकलन व टैस्टिंग कार्य तीव्र गति से होने लगा है, फलस्वरूप दूध उत्पादकों में संघ के प्रति विश्वसनीयता बढ़ी है एवं समिति में सदस्यों की भागीदारी में वृद्धि हुई है। समिति एवं संघ स्तर पर दूध संकलन एवं गुणवत्ता में सुधार लाने के साथ समिति सुदृढ़ीकरण पर ध्यान दिया जा रहा है।

पशु प्रबंधन एवं पशु चिकित्सा

उरमूल द्वारा दूध उत्पादकों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए दूध उत्पादन में वृद्धि एवं लागत को कम करने के लिए तकनीकी आदान सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। पशुओं के उत्तम स्वास्थ्य के बारे में ध्यान दिया जाता है। समय पर रोग निरोधक टीके, पशु चिकित्सा सुविधा, उन्नत हरा चना बीज, सरस संतुलित पशु आहार, मिनरल मिक्सचर, यू.एम.बी. इत्यादि सुविधाएं उपलब्ध कराई गई। इस वर्ष अभी तक 2536 मीट्रिक टन पशु आहार उपलब्ध कराया गया। 944 पशुओं को आपातकालीन पशु चिकित्सा सेवा, 4883 प्राथमिक पशु चिकित्सा सेवा और 5990 पशुओं के रोग निरोधक टीके लगाकर लाभान्वित किया गया। 5.36 मीट्रिक टन मिनरल मिक्सचर उपलब्ध कराया गया। राठी परियोजना के माध्यम से इस क्षेत्र की विख्यात राठी नस्ल के संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रयास किए जा रहे हैं। परियोजना के अन्तर्गत राजस्थान पशुधन विकास बोर्ड के सहयोग से उन्नत नस्ल के राठी सांड एवं मुर्रा भैंसे समिति स्तर पर उपलब्ध कराए जाते हैं। वर्मी कम्पोस्ट परियोजना के तहत भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए किसानों को प्रशिक्षित कर केचुएं उपलब्ध कराने से उत्साहजनक परिणाम निकले हैं।

प्रशिक्षण

उरमूल के संभागीय प्रशिक्षण केन्द्र द्वारा किसानों को जागरूक करने के लिए विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। उरमूल द्वारा सचिव रिफ्रेशर, एवं बेसिक कोर्स, एफ.ओ.पी., प्राथमिक पशु चिकित्सा, कृत्रिम गर्भाधान, स्वच्छ दुध उत्पादन कर बीकानेर, गंगानगर एवं हनुमानगढ़ जिले के पशुपालकों को लाभान्वित किया जा रहा है। राजस्थान पशुधन विकास बोर्ड के सौजन्य से समय–समय पर विशेषज्ञ प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाता है।

दूध उत्पाद, विपणन एवं नियंत्रण

उरमूल जहां एक ओर दूध उत्पादकों को उनके दूध का उचित मूल्य प्रदान कर विभिन्न सुविधाएं प्रदान कर विकास की ओर अग्रसर कर रहा है। शहरी उपभोक्ताओं को शुद्ध, स्वच्छ एवं उत्तम गुणवत्ता का दूध एवं दूध उत्पाद उचित मूल्य पर उपलब्ध करवा रहा है। आई.एस.ओ. प्रमाणन इस दिशा में मील का पत्थर साबित हुआ है। उरमूल का पाश्चराईज्ड दूध, बटर, घी, छाछ, लस्सी, दही, श्रीखण्ड, मावा, चीज उपभोक्ताओं में लोकप्रिय हैं। उरमूल राजस्थान में चीज एवं सरस गाय घी का एकमात्र उत्पादनकर्ता है। राजस्थान कोऑपरेटिव डेयरी फेडरेशन के सहयोग से उरमूल भारतीय सेना को 335 मीट्रिक टन चीज की आपूर्ति करेगी। इसकी सप्लाई अप्रैल 2008 से मार्च 2009 तक की जाएगी। उरमूल गत दो वर्षों से सेना को चीज की सफलतापूर्वक आपूर्ति कर रहा है। यह पहली बार है जब उसे इतनी मात्रा में एक साथ चीज भेजने का आर्डर मिला है।

दूध आम जन के उपभोग की आवश्यक वस्तु है। अतः आवश्यक हो जाता है कि किसी ऐसे साधन द्वारा सरकार दूध के मूल्य एवं उसके उपभोग पर नियंत्रण रखें जिससे एकाधिकार की प्रवृत्ति को बढ़ावा न मिल सके। सहकारिता क्षेत्र ऐसे उपायों पर खरा उतरता है। अतः श्वेत क्रांतियों के अंतर्गत दूध के उत्पादन, वितरण एवं उपभोग में सरकारी एवं सरकारी प्रयासों की भूमिका को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

(लेखिका बीकानेर विश्वविद्यालय के लोक प्रशासन विभाग में शोध छात्रा हैं।)

ई–मेल : dsdcb@rediff.com

भेड़ के दूध से पोषक तत्व एवं आहार उत्पाद

डॉ. आनन्द ओझा

यद्यपि भेड़ के दूध का उपयोग भेड़ पालकों द्वारा कई सदियों से किया जाता रहा है, तथापि इस विषय पर हमारे देश में वैज्ञानिक शोध कार्य आशान्वित नहीं हुआ है। राजस्थान में प्राथमिक सर्वेक्षण के लिए गाढ़वाला, नानीसर, किलचू तथा नौरंगदेसर गांवों से 100 परिवारों को चुना गया। ये सभी परिवार भेड़ पालकों के थे। सभी सर्वेक्षित व्यक्ति अविदुग्ध का प्रयोग करते हुए पाए गए। क्योंकि उनका मुख्य व्यवसाय भेड़ पालन ही था। अविदुग्ध की उपलब्धता सभी ने शरद ऋतु में, 75 प्रतिशत व्यक्तियों ने शिशिर में, 70 प्रतिशत ने वर्षा ऋतु में तथा 30 प्रतिशत ने वसंत ऋतु में बताई। ग्रीष्म ऋतु में इसकी उपलब्धता नहीं थी। अविदुग्ध का प्रयोग खोआ में 100 प्रतिशत, आटा गूंथने में 40 प्रतिशत, खीर में 30 प्रतिशत तथा दही जमाने में 25 प्रतिशत पाया गया।

भेड़ की अधिक प्रचलित किस्मों मारवाड़ी, मगरा तथा भारतीय कराकुल एवं गाय के दूध के नमूनों का मिल्क–स्कैन नामक स्वचालित यंत्र द्वारा वसा, प्रोटीन, लैक्टोज तथा वसारहित ठोस के लिए परीक्षण किया गया। भेड़ की उपर्युक्त तीनों नस्लों में वसा की मात्रा क्रमशः 5.69, 6.31 तथा 7.26 प्रतिशत थी। प्रोटीन की मात्रा क्रमशः 5.33, 5.02 तथा 5.54 प्रतिशत थी, लैक्टोज की मात्रा क्रमशः 5.03, 5.02 तथा 5.08 प्रतिशत थी तथा मात्र वसारहित ठोस की मात्रा क्रमशः 10.41,10.45 तथा 10.92 प्रतिशत थी। अविदुग्ध तथा गाय के दूध की तुलना करने पर विदित हुआ कि भेड़ के दूध तथा गाय के दूध में वसा की मात्रा क्रमशः 6.48 तथा 4.08 प्रतिशत, प्रोटीन क्रमशः 5.30 तथा 2.91 प्रतिशत, लैक्टोज क्रमशः 5.04 तथा 4.42 प्रतिशत तथा वसारहित ठोस क्रमशः 10.59 तथा 8.48 प्रतिशत थी। विश्लेषण के दौरान भेड़ के दूध में सभी पोषक तत्वों की मात्रा गाय के दूध की तुलना में अधिक प्रेक्षित की गई है।

भेड़ के दूध में फास्फोरस के अलावा सभी पोषक तत्व गाय के दूध की अपेक्षा अधिक पाए गए। मिल्क स्केन तथा एओएसी द्वारा प्राप्त परिणामों में कोई अंतर नहीं मिला। अविदुग्ध तथा गाय के दुग्ध की रासायनिक गुणों के लिए तुलना अम्लीयता, पी.एच., संपूर्ण ठोस एवं वसारहित ठोस के रूप में की गई। भेड़ के दूध की अम्लीयता 0.162 तथा गाय के दुग्ध की 0.138 थी। पी.एच. मान क्रमशः 6.50 तथा 6.80 था। इसी प्रकार संपूर्ण ठोस वसारहित ठोस की मात्रा अविदुग्ध में 20.01 तथा 10.42 प्रतिशत प्रेक्षित की गई, जबकि गाय के दुग्ध में केवल 13.63 तथा 8.32 प्रतिशत थी।

भेड़ के दूध तथा इससे विकसित उत्पादों का प्रयोगशाला में संवेदनात्मक मूल्यांकन द्वारा 5 अंश के पैमाने पर मानकीकरण किया गया। अविदुग्ध तथा गाय के दुग्ध का स्वीकार्य मूल्य क्रमशः 4.76 तथा 4.66, कच्चे दूध के लिए, 4.44 तथा 4.78 उबले दूध के लिए, 4.66 तथा 4.16 चाय के लिए, 4.82 तथा 4.30 दही के लिए, 4.50 रबड़ी के लिए, 4.68 तथा 4.20 आइसक्रीम के लिए, 4.50 तथा 4.50 खीर के लिए, 4.56 तथा 4.58 छेना के लिए,3.58 तथा 4.54 खोये के लिए, 4.58 तथा 4.70 चपाती के लिए था।

अनुसंधान परिणाम भेड़ के दूध में गाय के दूध की अपेक्षा अधिक पोषक तत्वों की उपलब्धता के बारे में जानकारी देते हैं। लोगों को इससे विकसित उत्पाद जैसे चाय तथा आइसक्रीम अधिक अच्छे लगे, जबकि अन्य पोषक उत्पाद जैसे, खीर, रबड़ी, खोया एवं चपाती कम स्वीकार्य लगे। इस तुलनात्मक अध्ययन से भेड़ के दूध की उपादेयता के बारे में तथ्यात्मक जानकारी ज्ञात होती है।

भेड़ पालन से ऊन उत्पादन द्वारा अधिक लाभ

ग्रामीण क्षेत्र में कृषक आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने हेतु भी भेड़ पालन करते हैं। भेड़ से उन्हें मांस एवं चमड़ा मिलता है तथा चमड़े से अन्य उत्पाद प्राप्त किए जा सकते हैं। भेड़ की ऊन को गरम वस्त्र जैसे कंबल, नमदा, गलीचा, दरी, लोई, आसन, घुग्गल एवं अन्य उत्पाद बनाने के लिए उपयोग में लाया जाता है। भेड़ की ऊन को वातानुकूलित कमरों में सर्दी–गरमी के अवरोधक बनाने एवं सजावट के लिए भी काम में लाया जाता है।

राष्ट्रीय ऊन उत्पादन का 40 प्रतिशत भाग राजस्थान में होता है, किंतु भेड़–पालक ऊन उत्पादन से वांछित लाभ नहीं प्राप्त कर रहे हैं जिसके मुख्य कारणों में भेड़ पालकों की अशिक्षा, पंजीकरण का अभाव, अधिकांशतया ऊन बिचौलियों द्वारा खरीदने पर कम मूल्य देना, ऊन की गुणवत्ता एवं नियंत्रण का ज्ञान न होना तथा खेड़ों का पलायन करने की प्रवृत्ति आदि हैं।

भेड़ पालकों को ऊन की गुणवत्ता के बारे में मोटे तौर पर जानकारी के लिए ऊन की मोटाई, लंबाई, रंग व इसमें कांटें की मात्रा के बारे में पता लगाना होता है। भेड़ के शरीर पर ऊन की कटाई वर्ष में दो बार–मार्च तथा सितंबर माह में की जाती है। मार्च कल्पन यानी कटाई की गई ऊन का रंग सफेद होता है तथा इसमें कांटों की मात्रा कम होती है, जबकि सितंबर माह में कल्पन की गई ऊन का रंग पीलापन लिए होता है तथा इसमें कांटों की मात्रा भी अधिक होती है। अतः दोनों मौसम में प्राप्त ऊन को अलग–अलग रखना चाहिए। सफेद ऊन से कीमत अच्छी प्राप्त होती है। ऊन मुख्य रूप से मोटी किस्म की होती है। ऊन का व्यास 30 माइक्रॉन से अधिक होता है तथा इससे कम व्यास की ऊन को बारीक ऊन के नाम से जाना जाता है।

राजस्थान में भेड़ों से प्राप्त ऊन की मोटाई 30 से 40 माइक्रॉन होती है जिसे कंबल, लोई, गलीचे, नमदे, घुग्गी, आसन आदि बनाने के लिए अच्छा माना जाता है। भेड़ पालक एवं किसान यदि थोड़ा–सा ऊन की गुणवत्ता की ओर ध्यान रखते हैं तो इससे अच्छा लाभ प्राप्त कर सकते हैं। भेड़ पालकों को एक बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऊन कल्पन से पूर्व भेड़ को अच्छी तरह से नहला देना चाहिए जिससे भेड़ पर लगी हुई धूल, मेंग्नी आदि साफ हो जाएगी, ऊन की कटाई करते समय कैंची आसानी से चलेगी तथा ऊन कल्पन में अधिक परिश्रम व समय नहीं लगेगा। ऊन कल्पन के समय यह भी ध्यान रखें कि भेड़ की चमड़ी से समान ऊंचाई पर ऊन कतरें, तथा यह भी ध्यान रखें कि भेड़ के शरीर पर घाव न हो। समान कटी हुई ऊन की कीमत भी अच्छी मिलती है। काली, भूरी व सफेद ऊन को अलग–अलग रखे। इसके अलावा भी इस बात का ध्यान रखें कि यदि उन्होंने एक से अधिक नस्ल की भेड़ें पाल रखी हैं तो उनसे कल्पन की गई ऊन को भी अलग–अलग रखें।

डेयरी उत्पाद व ऊन उत्पादन में लाभकारी है भेड़ पालन

भेड़ पालकों को चाहिए कि समय–समय पर ऊन की लंबाई, मोटाई, कांटे इत्यादि की जांच अपने निकट के भेड़ व ऊन विभाग से करवाएं जिससे उन्हें ऊन की गुणवत्ता के बारे में वांछित जानकारी प्राप्त हो सके। इसके अलावा भेड़ पालक अपनी भेड़ों से उत्पादित ऊन का उपयोग धागे बनाने, कम्बल, दरी, गलीचे, नमदे इत्यादि बनाने में करें तथा उनसे निर्मित उत्पाद गांव में बेचें तो उन्हें अच्छा लाभ प्राप्त होगा। इसी प्रकार ऊन से बने धागे, वस्त्र आदि गांव में ही पेड़–पौधों से प्राप्त प्राकृतिक रंग से रंगकर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

भारत सरकार के राजस्थान में स्थित केंद्रीय भेड़ व ऊन अनुसंधान संस्थान द्वारा ऊन की गुणवत्ता व ऊन की बहुउपयोगिता के बारे में समय–समय पर प्रशिक्षण आयोजित किया जाता है जिसमें भेड़ों के पालन, नस्ल, बीमारियों से बचाव, ऊन उत्पादन, विपणन तथा गुणवत्ता संबंधी विस्तृत जानकारी दी जाती है। इस जानकारी से भेड़ पालक एवं किसान अपनी आमदनी को अधिक बढ़ा सकते हैं।

भेड़ पालन रोजगार का साधन

हमारे देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि एवं पशुपालन पर निर्भर करती है। देश के शुष्क क्षेत्रों में सिंचाई जल की कमी, अल्पवृष्टि तथा असामयिक वर्षा के कारण कृषि की अपेक्षा पशुपालन की अहम् भूमिका है। देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भेड़ पालन व्यवसाय की महत्वपूर्ण भूमिका है। पशुगणना 2003 के अनुसार भारत में भेड़ों की कुल संख्या 61.8 लाख है, जो वर्ष 1991 की पशुपालन की तुलना में 6.91 प्रतिशत अधिक है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भेड़पालन व्यवसाय से 60 मिलियन लोगों को रोजगार सुलभ हो रहा है। इस व्यवसाय को अधिकतर भूमिहीन, लघु एवं सीमांत कृषक ही अपनाते हैं क्योंकि यह व्यवसाय कम समय एवं कम पूंजी लगाकर प्रारंभ किया जा सकता है।

भेड़ों की संख्या की दृष्टि से हमारे देश का तीसरा स्थान है तथा इनसे ऊन, मांस, खाल, दूध एवं खाद के रूप में हमें प्रतिवर्ष लगभग तीन हजार करोड़ रुपये की आय प्राप्त होती

है। परंतु हमारे देश की भेड़ों का उत्पादन स्तर विश्व की अन्य भेड़ों के औसत उत्पादन से कम है। अतः अन्य देशों की तुलना में किसान को कम आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। भारत सरकार ने ऐसे किसानों की आय बढ़ाने के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर के केंद्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान की स्थापना सन् 1962 में अविकानगर, तहसील मालपुरा, जिला टोंक (राजस्थान) में की। यह संस्थान भेड़ पालकों को अधिक से अधिक आर्थिक लाभ अर्जित कराने हेतु वैज्ञानिक शोध एवं तकनीकी ज्ञान पहुंचाने के प्रयत्न विभिन्न माध्यमों द्वारा लगातार कर रहा है। हमारे देश में किसान का भेड़ पालन व्यवसाय न्यूनतम खर्च पद्धति पर आधारित है। इसे अधिक उपयोगी बनाने के लिए निम्न उपायों को अपनाकर हम इससे अधिक उत्पादन ले सकते हैं।

- खेड़ में भेड़ों की संख्या सीमित होनी चाहिए। यह संख्या अपने संसाधनों को ध्यान में रखकर तय की जा सकती है। एक भेड़ के लिए 8X10 वर्गफुट स्थान पर्याप्त होता है। अतः इस आधार पर जगह के अनुसार अपने खेड़ की संख्या सीमित करनी चाहिए। इससे भेड़ों का रखरखाव उचित वैज्ञानिक तरीके से हो सकेगा और मृत्यु दर भी नियंत्रण में रहेगी। अनुसंधानों द्वारा विदित हुआ है कि खेड़ की औसत संख्या 50–75 होने पर प्रति भेड़ औसत खर्च कम आता है एवं औसत उत्पादन अधिक मिलता है।
- भेड़ पालक को स्थानीय जलवायु के अनुसार नस्ल का चयन करना चाहिए। शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में अधिक मांस वाली या मांस के साथ–साथ गलीचा ऊन (मध्यम श्रेणी) की अच्छी नस्ल वाली भेड़ पालनी चाहिए। विपरीत जलवायु की नस्ल पालने पर पशु अपना अधिकतम उत्पादन नहीं देते हैं।
- खेड़ में सभी आयु वर्ग के पशु समान अनुपात में होने चाहिए। अध्ययनों द्वारा ज्ञात हुआ है कि 2–4 वर्ष की आयु तक उत्पादन बढ़ता है, 4–6 वर्ष की आयु तक उत्पादन समान रहता है और 6 वर्ष की आयु के बाद उत्पादन घटने लगता है। अतः उत्पादन के आधार पर 6 वर्ष से अधिक आयु के पशु खेड़ से छंटनी करके निकाल देने चाहिए। खेड़ में प्रजनन हेतु अच्छी नस्ल के मेढ़े 1:30 के अनुपात में रखने चाहिए।
- खेड़ की उत्पादकता मेढ़े पर निर्भर करती है। अतः अच्छे मेढ़े का चयन करना चाहिए जिसमें नस्ल के अनुरूप गुण हों। मेढ़े की आयु 2–4 वर्ष की श्रेष्ठ होती है। खेड़ में प्रजनन हेतु मेढ़ा लगातार 2 वर्ष से अधिक बार उपयोग में नहीं लेना चाहिए। इसके पश्चात् अपना मेढ़ा दूसरे भेड़ पालक से बदल लेना चाहिए। इससे भेड़ पालक को अधिक से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।
- भेड़ों को ऊन काटने से पहले नहलाना चाहिए जिससे साफ ऊन प्राप्त होगी तथा ऊन काटने के समय पशु को अधिक चोट नहीं आयेगी। धुली हुई और साफ ऊन की अधिक कीमत मिलती है, जबकि गंदी, कांटों वाली ऊन की कम कीमत मिलती है। ऊन काटने के बाद इसका वर्गीकरण बढ़िया, मध्यम श्रेणी की ऊन और हल्की ऊन में करना चाहिए। बढ़िया ऊन की बाजार में अच्छी कीमत मिलेगी, जिससे भेड़ पालक को अधिक लाभ होगा।
- भेड़ों की मेंगनी का खाद उत्तम माना जाता है। अतः भेड़ पालकों को मेंगनियों को बाड़ों में अलग से एकत्रित करना चाहिए। इसी प्रकार गाय, भैंस के गोबर को अलग एकत्रित करना चाहिए। मेंगनियों की खाद का बागानों और फूलों की खेती में अधिक उपयोग होता है एवं कीमत भी अच्छी मिलती है, जबकि सामान्य खाद का उपयोग फसल उत्पादन में किया जाता है। एक भेड़ से प्रतिवर्ष एक क्विंटल खाद प्राप्त किया जा सकता है।
- भेड़ों में पोषण संबंधी कमी को पूरा करने के लिए सीमांत, छोटे और मध्यम श्रेणी के भेड़ पालक अपने खेड़ में हरे चारे की उपलब्धता बनाए रखने के लिए खेतों की मेड़ों के साथ–साथ चारा वृक्ष, जैसे–अरडू इत्यादि लगा सकते हैं। चारा वृक्ष लगाने में खर्चा भी नगण्य आता है तथा फसल उत्पादन भी प्रभावित नहीं होता है।
- खेड़ को स्वस्थ बनाए रखकर, भेड़ व्यवसाय को अधिक से अधिक लाभदायक बनाया जा सकता है। इसके लिए समय–समय पर भेड़ों को रोगों से बचाने के लिए फड़किया, चेचक, खुर–मुंह पका आदि रोगों के टीके लगवाने चाहिए।
- भेड़ पालन तीन प्रकार से किया जा सकता है,

  (अ) विस्तीर्ण भेड़ पालन (केवल चराई)

  (ब) अर्धसघन भेड़ पालन (चराई तथा सीमित मात्रा में दाना चारा)

  (स) सघन भेड़ पालन (इच्छानुसार दाना चारा) अनुसंधान।

अनुसंधान परिणामों द्वारा विदित हुआ है कि अर्ध सघन भेड़ पालन से ऊन एवं मांस का उत्पादन बढ़ता है और इसकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है जिससे भेड़ पालक की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है।

(लेखिका स्वतंत्र विज्ञान लेखक हैं।)

"जय जवान जय किसान"

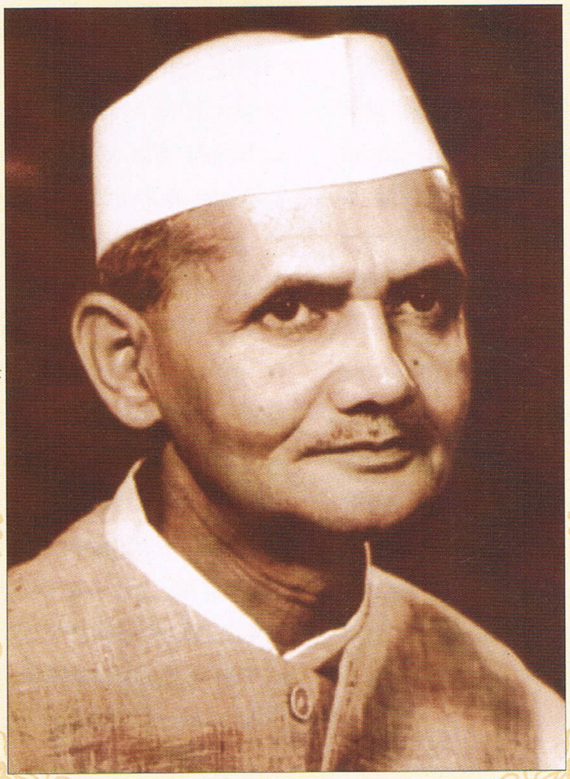

02.10.1904 -11.01.1966

**उनका आह्वान आज भी हमारे दिलों में गूंज रहा है
और हमें एक मजबूत एवं खुशहाल भारत
के निर्माण के लिए प्रेरित करता है।**

*कृतज्ञ राष्ट्र पूर्व प्रधानमंत्री
श्री लाल बहादुर शास्त्री को उनकी जयंती
के अवसर पर श्रद्धांजलि अर्पित करता है।*

सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

davp 22202/13/0121/0809

KH-11/08/02

दूसरी श्वेत क्रांति के मुहाने पर भारत

लोकेश कुमार

जब भी दुग्ध क्रान्ति की बात आती है तो एक ऐसे अतीत की छवि उभरकर आती है, जब भारत में दूध की नदियां बहा करती थीं। हमारे पौराणिक साहित्य में भी **'क्षीर सागर'** का उल्लेख मिलता है। आधुनिक युग में भारत के विकास में औद्योगिक विकास के योगदान को नकारा नहीं जा सकता किन्तु प्राचीनकाल में कृषि एवं पशुपालन ही भारतीय अर्थव्यवस्था के आधार थे। आधुनिक समय में हालांकि व्यावसायिक एवं औद्योगिक क्षेत्र का स्थान सर्वोपरि है फिर भी कृषि और पशुपालन क्षेत्र गौण नहीं हो पाया और समानान्तर रूप से इसका महत्व और स्थान पूर्ववत् ही बना हुआ है।

विश्व में भारत की स्थिति : पशुओं की संख्या की दृष्टि से तो भारत का स्थान सर्वोपरि था ही, अब दूध उत्पादन में भी भारत प्रथम स्थान पर आ गया है। किंतु भारत में अभी भी अपनी क्षमता से बेहद कम उत्पादन हो रहा है। जिसके कारण हैं–भारतीय पशुओं की दूध देने की क्षमता कम है जिसके अनेक कारण हो सकते हैं जैसे उत्तम किस्म की नस्लों का अभाव, स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव, पौष्टिक चारे का अभाव आदि। दूसरी श्वेत क्रान्ति की सफलता सुनिश्चित करने के लिए भारत में प्रौद्योगिकी मिशन प्रारम्भ किया गया है जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण रोजगार एवं आय बढ़ाने में डेयरी उद्योग की क्षमता का उपयोग करना है। इस मिशन के माध्यम से गुजरात में अपनाई गई आनन्द पद्धति के आधार पर भारत में समितियों का विस्तार करने में विशेष सहयोग मिला है। इसके लिए राज्य–स्तरीय समन्वय समितियां भी बनाई गई हैं। राष्ट्रीय डेयरी उद्योग के निरंतर विकास हेतु अनुसंधान परिषद वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली डेयरी विकास बोर्ड, केन्द्रीय भैंस अनुसंधान संस्थान, हिसार (हरियाणा), केन्द्रीय पशु आनुवंशकीय संस्थान, करनाल (हरियाणा), केन्द्रीय अनुसन्धान संस्थान, फरह (मथुरा), राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, इज्जत नगर (बरेली), भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, फांसी, पशु विज्ञान महाविद्यालय, मथुरा और विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों के संस्थान कार्यरत हैं।

दुग्ध उत्पादन एवं प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति उपभोग

भारत में दूध के उत्पादन एवं प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपभोग की दृष्टि से स्थिति अच्छी नहीं कही जा सकती। वैसे स्थिति में निरन्तर सुधार के संकेत अवश्य मिल रहे हैं किन्तु यदि हम दूसरे देशों के साथ भारत की तुलना करें तो हमें सरकारी एवं निजी स्तर पर काफी प्रयास करने होंगे तभी इस अंतर को मिटाया जा सकता हैं।

दुग्ध उत्पादन और उपभोग में यह असन्तुलन देश के विभिन्न राज्यों में भी विद्यमान है। दूध की उपलब्धता की दृष्टि से प्रथम स्थान 800 ग्राम प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के साथ पंजाब का है जबकि 640 ग्राम प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के साथ दूसरा स्थान हरियाणा का है। यह उपलब्धता गुजरात में 230 ग्राम, बिहार में 111 ग्राम और पूर्वोतर भारत में 30 ग्राम है जबकि स्वास्थ्य विभाग के अनुसार प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्धता 220 ग्राम होनी चाहिए। भारत में औसत उपलब्धता 214 ग्राम यानी आवश्यकात से 06 ग्राम कम हैं।

जिस प्रकार प्रतिदिन प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता में असन्तुलन है उसी प्रकार का असंतुलन दुग्ध उत्पादन में भी देखने को मिलता है जिसके लिए जिन क्षेत्रों में हालत दयनीय है, वहां ज्यादा ध्यान देने और आधुनिक अनुसंधानों का लाभ उन प्रदेशों तक पहुंचाने की आवश्यकता है।

दुग्ध उत्पादन वृद्धि के अनवरत प्रयास : राष्ट्रीय विकास के अनुभवों से सीख लेकर सरकार ने डेयरी उद्योग के चरणबद्ध विकास हेतु चार परियोजनाएं अपनाई। इन परियोजनाओं को ही प्रथम श्वेत क्रान्ति की सफलता और दुग्ध उत्पादन की प्रगति का श्रेय दिया जा सकता है।

- **प्रथम दुग्ध विकास परियोजना** – देश में दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रथम विकास परियोजना के अंतर्गत भारत में सन् 1965 में राष्ट्रीय डेयरी निगम और वर्ष 1990 में भारतीय डेयरी निगम की स्थापना की गयी। इसके कार्यकलापों से प्रोत्साहित होकर दुग्ध उत्पादकों में जागरुकता आई। दुग्ध उत्पादन क्षेत्र को गति प्रदान

प्रतिदिन प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता (ग्राम में)

वर्ष	भारत	अमेरिका
1950–51	132	512
1955–56	136	538
1960–61	128	617
1965–66	108	632
1970–71	113	550
1980–81	128	741
1983–84	135	748
1986–87	156	851
1989–90	166	860
2000–01	200	856
2006–07	214	900

दुग्ध उत्पादन का क्षेत्रवार विवरण

राज्य	उत्पादन (हजार टन में)	वार्षिक वृद्धि प्रतिशत में
उत्तर प्रदेश	8267	4.02
पंजाब	4950	4.02
राजस्थान	4932	3.00
गुजरात	3665	3.07
मध्य प्रदेश	3320	6.08
तमिलनाडु	3270	7.04
आन्ध्र प्रदेश	3056	6.04
हरियाणा	2960	4.02
प. बंगाल	3240	9.03
बिहार	2710	2.05
महाराष्ट्र	2900	5.02
कर्नाटक	2612	7.00
केरल	1625	8.05
असम	738	4.07
उड़ीसा	447	1.05

करने के लिए दोनों संस्थाओं के विश्व प्रसिद्ध अध्यक्ष डॉ. वर्गीज कुरियर के नेतृत्व में भारतीय डेयरी निगम के अन्तर्गत प्रथम श्वेत क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ।

- **द्वितीय दुग्ध विकास परियोजना–** **'आपरेशन फ्लड–I'** के नाम से प्रसिद्ध दूसरी दुग्ध विकास परियोजना की शुरुआत वर्ष 1970 में दस राज्यों को लेकर की। यह परियोजना 11 वर्ष तक चली। मदर डेयरी की स्थापना इसी परियोजना के दौरान की गई। चारों महानगरों अर्थात् मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता और दिल्ली में मदर डेयरी की स्थापना करने के लिए 117 करोड़ रुपये का निवेश किया गया और दुग्ध उत्पादन में तेजी लाने के लिए तकनीकी निवेश कार्यक्रम चलाया गया।

- **तृतीय दुग्ध विकास परियोजना–** इस परियोजना को वर्ष 1978 से 1985 तक सात वर्ष की अवधि के दौरान चलाया गया। इस परियोजना को **'आपरेशन फ्लड–II'** नाम दिया गया जिसके अन्तर्गत ग्रामीण दुग्धशालाओं को उपभोक्ता केन्द्रों से जोड़ने के लिए एक राष्ट्रीय दुग्ध ग्रिड की स्थापना की गई जिसके परिणाम अत्यन्त सकारात्मक रहे।

- **चतुर्थ दुग्ध विकास परियोजना –** इस परियोजना को **'आपरेशन फ्लड–III'** नाम दिया गया। परियोजना के दौरान इसके उद्देश्य को सार्थक करने अर्थात् भारत में दूध की नदियां बहाने के लक्ष्य को अपनाकर मार्च 1988 तक 50 लाख 70 हजार परिवारों को इस कार्यक्रम से जोड़ा। चूंकि भारतीय डेयरी निगम इतने विशाल तन्त्र पर नियन्त्रण करने में समर्थ नहीं था, इसलिए इसके अध्यक्ष ने अपनी सूझबूझ और दूरदृष्टि का परिचय देते हुए लगभग 50,000 दुग्ध उत्पादन सहकारी समितियों की स्थापना की। इस प्रकार भारतीय डेयरी निगम देश के 168 क्षेत्रों में स्थित इन सहकारी समितियों से प्रतिदिन औसतन 83 लाख लीटर दूध खरीदता है। इस परियोजना के दौरान पहले से ही स्थापित राष्ट्रीय दुग्ध ग्रिड क्षेत्रीय असमानताओं और असंतुलन को दूर करने के लिए दूध को एकत्रित एवं वितरित करने का कार्य करने लगा।

आपरेशन फ्लड–III को सफल बनाने के लिए राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद, मानसिंह प्रशिक्षण संस्थान, मेहसाणा, गलताभाई देसाई प्रशिक्षण संस्थान, पालपुर तथा तीन क्षेत्रीय प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण केन्द्रों में इससे संबंधित विभिन्न एजेंसियों के कर्मचारियों और किसानों को प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराई गईं।

दुग्ध उत्पादन बढ़ाने हेतु सकारात्मक प्रयास : पहली श्वेत क्रांति की सफलता सुनिश्चित करने के लिए कुछ कदम उठाए गए जिनके परिणामस्वरूप सफलता प्राप्त हुई।

- **निरतंर अनुसंधान –** दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए लगातार अनुसधांन किए जा रहे हैं किस क्षेत्र में किस नस्ल के पशु सार्थक

भारत में दुग्ध उत्पादन

वर्ष	दुग्ध उत्पादन (मिलियन टन में)
1991–92	56.03
1992–93	58.06
1993–94	65.00
1994–95	65.00
1996–97	68.02
1997–98	71.74
2000–01	98.07
2005–06	107.00
2006–07	112.08
2020 (लक्ष्य)	**235.00**

रहेंगे, कैसा चारा उपयुक्त रहेगा, रोगों से बचाव कैसे किया जाए आदि विषयों पर निरंतर अनुसंधान कार्य चलते रहते हैं और इन अनुसंधानों के प्राप्त निष्कर्षों की जानकारी पशु पालकों को दी जाती है।

● **आधुनिक डेयरियों की स्थापना** – आजकल सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र में आधुनिक संयंत्रों एवं सुविधाओं से युक्त डेयरी स्थापित करने का चलन बढ़ गया है। दिल्ली, पूना, करनाल, गुंटा एवं हरघटा (पश्चिमी बंगाल) में ऐसी डेयरियां स्थापित की गई हैं। दुग्ध उत्पादों के परिरक्षण एवं प्रसंस्करण के लिए अमृतसर, आणंद, हसना एवं राजकोट में कारखाने स्थापित किए गए हैं।

● **परिवहन व्यवस्था** – पूरे देश में विवरण तंत्र स्थापित करने के लिए आधुनिक परिवहन की शुरुआत की गई। चूंकि दूध एवं दुग्ध उत्पादों को सुदूर क्षेत्रों तक पहुंचाना होता है, इसलिए गीतगृहयुक्त परिवहन की व्यवस्था की गई ताकि उत्पादों की बर्बादी न हो।

● **दुग्ध संयंत्रों की स्थापना** – श्वेत क्रांति की सफलता और डेयरी उद्योग के विकास को सुनिशिचित करने के लिए देशभर में 197 दुग्ध संयंत्रों की स्थापना की गई। इनमें तरल दुग्ध संयंत्र, दूध उत्पादन वाले कारखाने, प्रयोगशालाएं तथा दुग्ध परियोजना एवं गांवों में स्थित डेयरियां शामिल हैं। दूसरी श्वेत क्रांति को सुदृढ़ आधार प्रदान करने के लिए इनमें विस्तार किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

● **पशु–नस्ल सुधार योजना** – पशु नस्ल सम्बंधी योजना को पूरे देश में 631 ग्रामीण खण्डों में चलाया जा रहा है। इस योजना के माध्यम से अच्छी नस्ल के साण्ड तैयार किये जा रहे हैं। कृषि कार्यों हेतु भैंसों की आवश्यकता नाममात्र की रह गई है। इसलिए इन खण्डों के माध्यम से साण्डों और भैंसों के नस्ल सुधार कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इसके अलावा, देश भर में 1500 से अधिक कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए गए हैं जिनके माध्यम से मिश्रित नस्ल के पशु तैयार किए जा रहे हैं ताकि उन पशुओं से वयस्कावस्था में अधिकतम दूध का उत्पादन किया जा सके।

● **चारा बैंकों की स्थापना** – देश के विभिन्न नगरों और कस्बों में चारा बैंक विद्यमान हैं जहां से पौष्टिक एवं उत्तम क्वालिटी का चारा प्राप्त किया जा सकता है। विदेशी नस्ल की गायों और साण्डों के लिए विशेष किस्म का आहार ब्लाक खण्डों में उपलब्ध होता है जिससे अधिकतम दूध प्राप्त किया जा सकता है। इनके अलावा, जगह–जगह कटा हुआ हरा चारा भी उपलब्ध हो जाता है।

● **पशु डेयरी विकास परियोजना** – इस प्रकार की परियोजनाएं राजस्थान, गुजरात, पंजाब, मध्य प्रदेश और कर्नाटक में विश्व बैंक की सहायता से चलाई जा रही हैं जिनके अंतर्गत पशुपालकों को विविध प्रकार की सहायता एवं प्रोत्साहन प्रदान करके दूध का उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया गया है। इन परियोजनाओं के परिणाम स्वरूप वर्ष 1991–92 के 5.8 करोड़ टन दूध के उत्पादन से बढ़कर 2000–2001 में 8.3 करोड़ टन दूध का उत्पादन हुआ और 2010–11 तक 15 करोड़ टन दुग्ध उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

● **पशुधन बीमा योजना** – पूरे देश में नाममात्र के प्रीमियम पर पशुओं का बीमा किया जाता है ताकि पशु की मृत्यु होने की स्थिति में पशुपालक को घाटे से बचाया जा सके। इसके लिए पशु की मृत्यु होने पर बीमा एजेन्सी का पशु–चिकित्सक मृत्यु होने के कारण के साथ बीमा दावे हेतु अपनी रिपोर्ट बीमा कंपनी को भेजता है।

● **पशु –चिकित्सा व्यवस्था** – पशुओं को चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए देश भर में 12,370 पशु–चिकित्सा केन्द्रों और लगभग 70 एम्बुलेन्स दवा केन्द्रों की व्यवस्था सरकार ने की है। ये केन्द्र समय–समय पर पशुपालकों को पशु रोगों और उनके निदान की जानकारी प्रदान करते हैं।

● **पशु–क्रय हेतु ऋण व्यवस्था** – देश भर में सभी राष्ट्रीय बैंकों की शाखाएं पशु खरीदने के लिए ऋण सुविधा प्रदान करती हैं। कुछ मामलों में पशु खरीदने हेतु ऋण सुविधा भी उपलब्ध कराई जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में किसान विकास एजेन्सियां भी पशु खरीदने हेतु ऋण सुविधा उपलब्ध करा रही हैं।

● **दुग्ध संगठनों की स्थापना** – दूध के संग्रहण एवं वितरण के लिए केन्द्रीय, प्रादेशिक, जिला एवं ग्राम स्तरों पर अनेक संगठन एवं सहकारी समितियां कार्यरत हैं। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड और गुजरात में अमूल डेयरी इनमें प्रमुख हैं। निजी क्षेत्र में पारस, पराग, नेस्ले, मार्डन फूड आदि की कार्य प्रणाली ने दूध उद्योग और व्यवसाय को नए आयाम दिए हैं।

ऊपर दिए गए विवरण, दुग्ध क्षेत्र द्वारा की जा रही अनवरत प्रगति, दुग्ध उत्पादन हेतु सरकार द्वारा दिए जा रहे विभिन्न प्रोत्साहनों और सुविधाओं, निरंतर चलने वाले अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रमों, दुग्ध संगठनों के सकारात्मक प्रयासों और दुग्ध परियोजनाओं के सफल क्रियान्वयन के आधार पर कहा जा सकता है कि हमें द्वितीय श्वेत क्रान्ति के उद्देश्य में निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होगी और भारत में पुनः दूध की नदियां बहने लगेंगी और भारत पौराणिक साहित्य में किए गए उल्लेखों के अनुसार स्वयं में **'क्षीर सागर'** बन जाएगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

हमारे जीवन में गाय का महत्व

डॉ. मोती सिंह राठौड़

महामहिम भूतपूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. कलाम द्वारा लिखित **"भारत दृष्टि 2020"** में राष्ट्रीय सुरक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, आर्थिक सुरक्षा, खाद्यान्न सुरक्षा एवं पर्यावरण सुरक्षा का उल्लेख मिलता है। उपरोक्त पांचों प्रकार की सुरक्षा प्रदान करने की क्षमता गाय में विद्यमान है।

राष्ट्रीय सुरक्षा और गाय

किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा का सीधा सम्बंध आम व्यक्ति की स्वस्थ, सबल, दीघार्यु एवं निरोगी काया से होता है। गाय का अमृततुल्य दूध मनुष्य को स्वस्थ, सबल, दीघार्यु एवं निरोगी क़ाया प्रदान करने में सक्षम है। चिकित्सा विज्ञान के अनुसार मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए प्रतिदिन 13 औंस (1 औंस यानी 28.5 ग्राम) दूध मिलना चाहिये। लेकिन हमारे देश में केवल 1 औंस ही दूध मिल रहा है। यह भी लगातार बढ़ती हुई जनसंख्या और घटती हुई पशु संख्या के परिणामस्वरूप आने वाले समय में ओर कम मिलेगा। वर्तमान में हमारे देश की लगभग एक तिहाई जनसंख्या कुपोषण की शिकार है। अमेरिका, स्विटरलैण्ड एवं डेनमार्क जैसे देशों में प्रति व्यक्ति कम से कम 50 औंस दूध मिल रहा है। भैंस की तुलना में गाय का दूध अधिक सुपाच्य होता है। वैज्ञानिक अनुसंधान से पता चला है कि भैंस के दूध को पचाने में 9 घंटे का समय लगता है जबकि गाय का दूध अत्यंत अल्पावधि केवल 2 घंटे में ही पच जाता है।

वर्तमान में नई आर्थिक नीति के लागू होने से पशु कत्लखाने का उद्योग दिन दुगुनी रात चौगुनी गति से बढ़ रहा है जिसके परिणामस्वरूप प्रति हजार व्यक्ति पशुओं की संख्या भी प्रति वर्ष लगातार घटती जा रही है। 1951 में प्रति हजार व्यक्ति पर गौवंश का अनुपात 430 था। 1961 में प्रति हजार व्यक्ति पर गौवंश का अनुपात 400 रह गया। 1972 में घटकर 326, वर्ष 1982 में यह आंकडा 278 एवं वर्ष 1995 में यह आंकड़ा 200 से भी नीचे आ गया है। जिस अनुपात में गौवंश घट रहा है उसके अनुसार वर्ष 2011 में प्रति हजार व्यक्ति यह आंकड़ा लगभग 20 ही रह जाएगा। अर्जेटीना में प्रति हजार व्यक्ति पशुओं की संख्या 2089, कोलम्बिया में 919, आस्ट्रेलिया में 1365 एवं ब्राजील में 726 है। घटते गौवंश के कारण हमारे देश की राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में है। इसलिए राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि गौ–वंश का संरक्षण एवं संवर्धन समय रहते किया जाए।

गाय हमारी स्वास्थ्य की रक्षक है। गाय के दूध में चमत्कारिक औषधीय गुण होते हैं। गाय के दूध से निर्मित उत्पाद जैसे छाछ (मठा), मक्खन, दही एवं घी निरोगी काया बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। गौमूत्र तो असाध्य बीमारी में भी रामबाण औषधि के रूप में कारगर है। वर्तमान में गाय के पंचगव्य के उपयोग से एड्स एवं कैंसर जैसी जानलेवा बीमारियों के रोगी को जीवनदान मिल रहा है। गाय का लोहा तो वर्तमान में विदेशों के लोग भी मानने लगे हैं। गाय को चलता–फिरता चिकित्सालय कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जैविक अन्न, सब्जियां एवं फल स्वस्थ जीवन की सौ प्रतिशत गारन्टी देने में सक्षम हैं।

रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग से हानिकारक एवं मित्र कीटों दोनों का ही सफाया हो जाता है लेकिन प्राकृतिक, जैविक एवं गौमूत्र से निर्मित कीटनाशकों से केवल हानिकारक कीटों का ही सफाया होता है। क्या आपने कभी सोचा है कि हिन्दू संस्कृति के अनुसार

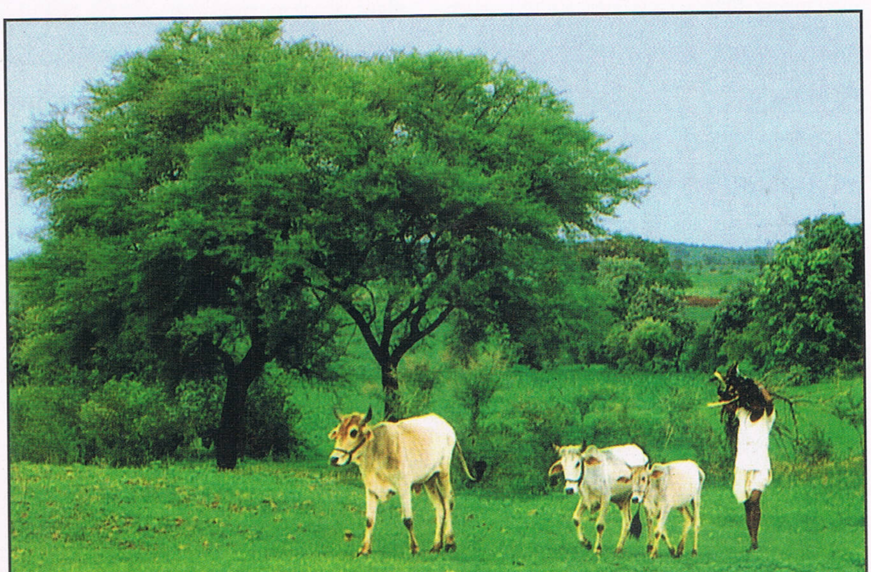

गाय घास को जड़ से उखाड़ कर नहीं खाती, जिससे भूक्षरण नहीं होता

मृत शरीर को धरती पर लिटाने से पहले उस स्थान की गाय के गोबर से ही क्यों लिपाई की जाती है ? इसका प्रमुख कारण है कि शव पर लगे संक्रमण फैलाने वाले कीटाणुओं का असर परिवारजनों पर नहीं पड़े। ठीक इसी प्रकार शव यात्रा में सबसे आगे गाय के गोबर से बने कंडों को जलाकर उसका धुंआ किया जाता है। जो शव यात्रा में सम्मिलित लोगों की शव के संक्रामक कीटाणुओं से रक्षा करता है। पूजा हवन के दौरान भी गाय के गोबर से लिपाई की जाती है जिससे उक्त स्थान पवित्र एवं संक्रमणमुक्त हो जाता है। गाय कभी भी चरते समय घास को जड़ सहित उखाड़ कर नहीं खाती है। जिसके परिणामस्वरूप गाय की चराई से धरती माता का क्षरण नहीं होता है।

आर्थिक सुरक्षा और गाय

गाय भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ है। हमारे देश में 144 करोड़ बैलगाड़ियों से अरबों टन माल की ढुलाई की जाती है। भारत में पशु आधारित कृषि पद्वति से लगभग 27,000 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त होती है जिसके परिणामस्वरूप 237 करोड़ टन डीजल की बचत होती है। प्रति वर्ष पेट्रोलियम एवं रासायनिक उर्वरकों के आयात पर बजट की बहुत बड़ी धनराशि का हिस्सा सरकार द्वारा खर्च किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप हमें विदेशों से ऋण लेना पड़ता है। गोबर को सही तरीके से ईंधन के रूप में उपयोग किया जाये तो हर वर्ष हम लगभग 14 करोड़ वृक्षों की कटाई को रोक सकते है। जिसके परिणामस्वरूप देश को आसानी से 4 लाख 76 हजार करोड़ रुपये की बचत हो सकती है। गौवध व अर्थव्यवस्था का सीधा सम्बन्ध है। जीव–जन्तु कल्याण बोर्ड की पत्रिका 2004 के अनुसार अलकबीर एक्सपोर्ट लिमिटेड, हैदराबाद के पास स्थित कत्लखाने में एक वर्ष में 1,82,400 पशु काटे जाते हैं। यदि इन पशुओं को काटा नहीं जाए तो 910.25 लाख रुपये की बचत हो सकती है। जबकि इन पशुओं के मांस, चमड़े इत्यादि के विक्रय से मात्र 20 करोड़ रुपये का ही लाभ हुआ। वर्तमान में देश में कई संस्थाएं प्रति वर्ष गोबर एवं गौमूत्र से ही करोड़ों रुपये अर्जित कर रही हैं। हमारे देश के कृषि वैज्ञानिकों को भी इस दिशा में ओर अनुसंधान करना चाहिये।

प्रति वर्ष पशुधन से 70 लाख टन पेट्रोलियम की बचत होती है। 60 अरब रुपये का दूध एवं 30 अरब रुपये की उत्तम गुणवत्तायुक्त खाद प्राप्त होती है। उपरोक्त आंकड़े देश की आर्थिक व्यवस्था एवं पशुधन के चोली–दामन के रिश्ते को दर्शाते हैं।

> एक गाय अपने जीवनकाल में लगभग 41,0440 व्यक्तियों हेतु एक समय का भोजन उपलब्ध कराने में सक्षम है जबकि एक गाय के मांस से 80 मांसाहार व्यक्तियों का पेट भर सकता हैं। उर्वरकों में घातक रसायन के उपयोग से विभिन्न जानलेवा बीमारियां फैल रही हैं। पूरे विश्व में एक मिनट में चार व्यक्तियों की मौत केवल कृषि में उपयोग होने वाले कृषि रसायनों के कारण होती है। बाजार से जब हम एक किलोग्राम हरी सब्जी खरीद कर लाते हैं तो उसमें 500–700 मिलीग्राम जहर होता है। रासायनिक उर्वरकों से भी तब ही अच्छी कृषि उपज प्राप्त होती है जब मृदा में पर्याप्त मात्रा में गोबर खाद उपस्थित होती है। रासायनिक उर्वरकों के कारण प्रतिवर्ष 10 प्रतिशत भूमि बंजर होती जाती है। गोबर की खाद भूमि का प्राकृतिक आहार है। रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से फसलों की जल मांग भी बढ़ जाती है एवं मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों का ह्रास होता है। जबकि गोबर की खाद के प्रयोग से मिट्टी में जलधारण शक्ति में 16 प्रतिशत की वृद्धि होती है।

आज का युग आर्थिक युग बन गया है। हर गतिविधि का आंकलन नफे एवं नुकसान से किया जाता है। इसलिए हमारे देश के अधिकांश अल्पशिक्षा वाले किसान एवं निरक्षर किसान, जब गाय बुढ़ी हो जाती है और बछड़ा–बछड़ी जनने एवं दूध देने में असमर्थ हो जाती है तब वे समझते हैं कि अब गाय उनके लिए आर्थिक दृष्टिकोण से लाभदायक नहीं रही है। तब उसे वे लावारिस भटकने के लिए छोड़ देते हैं अथवा चन्द रुपयों के लिए कत्लखाने में कटने के लिए बेच देते हैं। लेकिन भोले–भाले किसानों को यह समझाने की जरूरत है कि वे केवल गोबर एवं गौमूत्र से ही काफी धन प्राप्त कर सकते हैं। जानकारी के अभाव में ही गाय की ऐसी हालत हो रही है। सरकार को गाय के गोबर के उत्पाद एवं गौमूत्र के उत्पादों के विपणन का व्यापक प्रसार–प्रचार करना चाहिये। ऐसा होने पर गाय की आर्थिक उपादेयता मालूम पड़ने पर कोई प्रकृति के इस अनमोल रत्न को लावारिस नहीं छोड़ेगा, न ही कत्लखाने में कटने के लिए बेचेगा। अब तो समय ऐसा आ गया है कि देश के अधिकांश क्षेत्रों में विदेशी मूल की गाय नजर आती

हैं। हमारी स्थानीय नस्ल की गाय के तो दर्शन मात्र भी दुर्लभ हो गये हैं।

देशी गौवंश के संरक्षण, संवर्धन एवं नस्ल सुधार कर पंचगव्य बनाकर हजारों रुपये की आमदनी की जा सकती है। गाय के गोबर से गोबर गैस एवं विद्युत ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है गौ–मूत्र से जैविक कीटनाशक, मनुष्यों के स्वास्थ्य के रक्षार्थ कई प्रकार की औषधियों का निर्माण किया जा सकता है। गाय के गोबर से उच्च गुणवत्तायुक्त वर्मीकम्पोस्ट (केंचुएं की खाद) एवं प्रॉम जैसी खाद का निर्माण किसान आसानी से कर सकता है। गोबर से अगरबत्ती एवं अन्य सौन्दर्य प्रसाधन की सामग्री का भी निर्माण किया जा सकता है।

हमारे देश में करीब डेढ़ अरब बैलगाड़ियों से अरबों टन माल की ढुलाई की जाती है

खाद्यान्न सुरक्षा और गाय

रासायनिक उर्वरकों के निर्माण हेतु बड़े–बड़े संयंत्रों की आवश्यकता होती है जिसके लिए हजारों लीटर पानी की भी आवश्यकता पड़ती है। जैविक खादों को किसान स्वयं के घर अथवा खेत पर आसानी से बना सकता है। एक गाय के गोबर से एक वर्ष में लगभग 80 टन तक उत्तम गुणवत्तायुक्त खाद बनाई जा सकती है। हमारे देश में लगभग 75 प्रतिशत असिंचित क्षेत्रफल एवं केवल 25 प्रतिशत भू–भाग ही सिंचित कृषि के क्षेत्र में आता है। इसलिए हमारी परिस्थितियों को देखते हुए अधिक से अधिक जैविक खादों का उपयोग करना ही सार्थक होगा।

हमारे देश में आज भी 52 प्रतिशत पशुओं से एवं 47 प्रतिशत ट्रेक्टरों से जुताई की जाती है। अतः यदि हम यह कहे तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आज भी हमारा खाद्यान्न उत्पादन गौ–वंश आधारित है। भूमंडलीकरण की एक विशेषता यह भी है कि विश्व के किसी भी भाग में कोई अच्छी अथवा बुरी घटना घटित होती है तो उसका असर विश्व के दूसरे देशों में भी पड़ता है। इसी कारण अफ्रीका, एशिया एवं लेटिन अमेरिका में खाद्यान्न की कमी एवं भुखमरी की गूंज विश्व के समृद्वशाली एवं विकसित देशों में भी सुनाई पड़ रही है।

विश्व में उपलब्ध कृषि भूमि प्रति व्यक्ति 2.1 एकड़ है जबकि अमेरिका में जनसंख्या कम एवं भू–भाग अधिक होने के कारण प्रति व्यक्ति 12 एकड़ भूमि है जबकि हमारे देश में ये मात्र आधा एकड़ प्रति व्यक्ति ही है।

कुछ कृषि वैज्ञानिकों ने यह भी आशंका जताई है कि यदि रासायनिक उर्वरकों पर आधारित वर्तमान कृषि पद्वति चलती रही तो निकट भविष्य में हमारे आज के उपजाऊ क्षेत्र मरूस्थल में बदल जाएंगे।

पर्यावरण सुरक्षा और गाय

परोक्ष रूप से गाय पर्यावरण की सुरक्षा में भी अपनी महत्ती भूमिका निर्वहन करती है। बैलों द्वारा कृषि कार्यों एवं भार ढोने के कारण लाखों लीटर पेट्रोल एवं डीजल का उपयोग नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण को इनके जलने से होने वाले प्रदूषण से मुक्ति मिलती है। भारत में गोबर के कण्डों के बदले कोयला या लकड़ी को ईंधन के रूप में जलाया जाये तो लगभग साढ़े तीन करोड़ टन कोयला या 6 करोड़ 80 लाख टन लकड़ी की आवश्यकता पड़ेगी। जिसके लिए बहुत बड़ी मात्रा में वनों की कटाई करनी पड़ेगी और सोचो साढ़े तीन करोड़ टन कोयले के जलने से कितना प्रदूषण होगा।

(लेखक विद्या भवन कृषि विज्ञान केंद्र बड़गांव में शस्य वैज्ञानिक हैं।)
ई–मेल : vbkvk@yahoo.com

दूध उत्पादन- आय व रोजगार का साधन

रमेश कुमार दुबे

दूध एक जीवनदायी पेय है। स्तनधारी जीवों की सभी प्रजातियां (मनुष्य से लेकर व्हेल तक) दूध उत्पन्न करती हैं। कई शताब्दी पूर्व संभवतः ईसा पूर्व 6000–8000 में मनुष्य ने दुधारू पशुओं को पालना शुरू किया ताकि नियमित रूप से दूध मिल सके। गाय, भैंस, बकरी, भेड़ और ऊंट प्रमुख दुधारू पशु हैं। भौगोलिक स्थिति के अनुरूप इन दुधारू पशुओं का पालन–पोषण किया जाता रहा है। धीरे–धीरे दूध आहार से आगे बढ़कर आय व रोजगार प्रदान करने का प्रमुख स्रोत बन गया।

दुग्ध उत्पादन का कार्य अधिकांशतः लघु व सीमांत किसान तथा भूमिहीन श्रमिक करते हैं। इससे समाज के कमजोर वर्गों को आर्थिक सुरक्षा मिलती है। इसे भारत के उदाहरण से समझा जा सकता है। देश के 72 प्रतिशत गाय–बैल, 85 प्रतिशत भैंस, 68 प्रतिशत पोल्ट्री और 85 प्रतिशत सूअरों का मालिकाना हक लघु व सीमांत किसानों तथा भूमिहीन श्रमिकों के पास है। इन पशुधनों की उत्पादकता में बढ़ोतरी प्रत्यक्ष रूप से गरीबी उन्मूलन में सहायक होती है। दरअसल दुग्ध उत्पादन का बहुआयामी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इससे असमानता, गरीबी, कुपोषण पर सीधा प्रहार होता है। दुग्ध उत्पादन का सबसे सकारात्मक पहलू यह है कि इससे समाज के अकुशल लोगों, विशेषकर महिलाओं की स्थिति में सुधार होता है। जीवन स्तर में वृद्धि, बढ़ते शहरीकरण, प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी, बदलती अभिरुचि के कारण दूध की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है। अब तो दूध का विविध रूपों में प्रयोग बढ़ रहा है जैसे सुगंधित दूध, आइसक्रीम, मिल्क केक, प्रोबायोटिक व मीठी दही आदि। यह प्रवृत्ति दुग्ध उत्पादकों के लिए शुभ संकेत है।

> दूध उत्पादन में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। यहां प्रतिवर्ष 10.2 करोड़ टन दूध का उत्पादन होता है। दूध उत्पादन में अमेरिका और चीन का क्रमशः दूसरा और तीसरा स्थान है। यद्यपि देश में दूध की प्रति व्यक्ति दैनिक खपत 246 ग्राम तक पहुंच गई है फिर भी यह विश्व औसत (265 ग्राम प्रतिदिन) से कम है। देश में उत्पादित दूध का 80 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र तथा शेष 20 प्रतिशत सहकारी और निजी डेयरियों से आता है। देश में 265 से अधिक जिलों में फैली 1.2 लाख ग्राम–स्तरीय सहकारी दुग्ध समितियां प्रतिदिन 2.1 करोड़ लीटर दूध का संग्रह करती हैं। इन समितियों से 1.24 करोड़ किसान जुड़े हैं। दूध उत्पादन के शिखर तक पहुंचने में भारत को कई उतार – चढ़ाव झेलने पड़े हैं। इसमें सहकारी दुग्ध संघों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अतः इनकी भूमिका का विश्लेषण आवश्यक है।

सहकारी दुग्ध संघ के पूर्व की स्थिति

देश में 1940 के पूर्व तक दूध उत्पादन मुख्यतः असंगठित क्षेत्र के हाथों में था। दूध की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ाने पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। न केवल शहरों में स्थित तबेलों से शहरों में गंदगी फैलती थी अपितु ग्रामीण क्षेत्रों में पशुधन की स्थिति खराब थी। उपभोक्ताओं के समक्ष घटिया क्वालिटी के दूध और दुग्ध उत्पाद खरीदने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नहीं था। किसानों के लिए दूध व्यवसाय घाटे का सौदा हो गया था क्योंकि बेईमान बिचौलिए व ठेकेदार उनका शोषण करते थे। दूध की घरेलू मांग को पूरा करने के लिए यूरोप व न्यूजीलैण्ड से दूध पाउडर का आयात किया जाता था।

सहकारी दुग्ध संघ की स्थापना

सहकारी दुग्ध संघ स्थापित करने का विचार स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में उपजा। 1945 में गुजरात के खेड़ा जिले के किसानों ने हड़ताल कर दी। वे ठेकेदारों द्वारा किए जा रहे आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठा रहे थे जो अंग्रेज सरकार के नाम पर दूध एकत्र कर रहे थे। त्रिभुवनदास पटेल के नेतृत्व में हुई इस हड़ताल को बल्लभभाई पटेल व मोरारजी देसाई का समर्थन प्राप्त था। सरदार पटेल ने किसानों को अपना सहकारी संघ बनाने की सलाह दी। उन्होंने किसानों को बताया कि जब डेयरी व्यवसाय की पूरी श्रृंखला पर किसानों का नियंत्रण हो जाएगा तभी लाभ उन तक पहुंच पाएगा। किसानों का केवल दूध उत्पादन पर ही नहीं, अपितु दूध एकत्र करने, प्रसंस्करण करने और बेचने पर भी पूरा नियंत्रण होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उन्होंने किसानों को बिचौलियों का पूरी तरह से सफाया करने के लिए कहा जिसके लिए एकमात्र उपाय अपना सहकारी संगठन बनाना ही था। हड़ताल सफल रही और दूध एकत्र करने पर लगा एकाधिकार समाप्त हो गया। औपनिवेशिक सरकार ने किसानों को अपना सहकारी संघ बनाने की अनुमति दे दी। उन्हें विश्वास था कि गरीब अनपढ़ किसान सहकारी संघ नहीं बना पाएंगे लेकिन उनका अनुमान गलत निकला। दो छोटी–छोटी संस्थाओं

और प्रतिदिन 247 लीटर दूध की खरीद से शुरू हुआ यह संगठन आज प्रतिदिन 240 लाख लीटर दूध उत्पन्न कर रहा है।

कैरा जिला उत्पादक सहकारी संघ

सरदार पटेल की सलाह से कैरा जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ की स्थापना 1946 में हुई। इसके अध्यक्ष त्रिभुवन दास पटेल थे। संघ ने उपभोक्ताओं द्वारा दिए मूल्य का सबसे बड़ा हिस्सा दूध उत्पादकों को दिलाने का लक्ष्य निर्धारित किया। संघ ने अधिक उत्पादक के बजाए अधिक लोगों के द्वारा उत्पादन पर बल दिया। कैरा संघ की रणनीति सफल रही। यहां की रणनीति सीखने के लिए गुजरात के अन्य भागों से किसान आने लगे और वापस लौटने पर अपने–अपने जिलों में सहकारी संघों की स्थापना करने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि गुजरात के विभिन्न जिला दुग्ध उत्पादक संघों ने गुजरात सहकारी दूध विपणन संघ (अमूल) की स्थापना की जो दूध व दूध उत्पादों के विपणन का कार्य करता है। 1964 में तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री अमूल द्वारा स्थापित पशुचारा फैक्टरी का उद्घाटन करने आनंद आए। वे अमूल के कार्यों से प्रभावित हुए और आनंद में उगे अमूल रूपी पौधे को पूरे देश में रोपने की इच्छा व्यक्त की। 1965 में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (एन.डी.डी.बी.) की स्थापना हुई।

दुग्ध सहकारी संघों की पहुंच

ग्रामस्तरीय दुग्ध उत्पादक संघ, ग्राम–स्तरीय संस्थाओं से दूध एकत्र करते हैं। दूध का प्रसंस्करण और विपणन 170 दूध उत्पादक सहकारी संघों के माध्यम से किया जाता है जो 15 राज्य सहकारी दूध विपणन महासंघों से संबद्ध हैं। इस प्रकार देश भर में एक त्रिस्तरीय व्यवस्थित सहकारी ढांचा उभरकर आया है जो आनंद पद्धति के नाम से प्रसिद्ध है। इन तीन स्तरों को खरीद, प्रसंस्करण और विपणन के तीन प्रमुख कार्य सौंपे गए हैं। देश के 1.24 करोड़ से अधिक किसान लगभग 1.2 लाख ग्राम डेयरी सहकारी समितियों के तहत संगठित हैं। ये समितियां एक राष्ट्रीय दूध ग्रिड का अंग हैं जो देश भर में दूध उत्पादकों को 800 से अधिक शहर और कस्बों के उपभोक्ताओं से जोड़ती हैं। दुग्ध उत्पादन में हुई इस अप्रत्याशित वृद्धि को श्वेत क्रांति की सज्ञा दी गई।

श्वेत क्रांति के प्रभाव

दुग्ध सहकारी संघों ने किसानों को आय का एक स्थायी व नियमित माध्यम प्रदान किया। इससे उनकी आय बढ़ी और जीवन– स्तर में सुधार आया। ग्रामीण क्षेत्रों में आय की अनुकूल संभावना से ग्रामीण जनसंख्या का शहरों की ओर पलायन रुका।

भारत में दूध उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति उपलब्धता

वर्ष	उत्पादन (दस लाख टन)	प्रति व्यक्ति उपलब्धता (ग्रा. प्रति)
1991–92	55.7	178
1992–93	58.0	182
1993–94	60.6	187
1994–95	63.8	194
1995–96	66.2	197
1996–97	69.1	202
1997–98	72.1	207
1998–99	75.4	213
1999–2000	78.3	217
2000–01	80.6	220
2001–02	84.4	225
2002–03	86.2	230
2003–04	88.1	231
2004–05	92.5	233
2005–06	97.1	241
2006–07	100.1	246
2007–08	100.2	246

स्रोत– वार्षिक रिपोर्ट, पशुपालन एवं डेयरी विभाग, कृषि भवन, नयी दिल्ली

सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में डेयरी क्षेत्र का योगदान

वर्ष	जीडीपी में योगदान (प्रतिशत में)
1980–81	4.8
2002–03	6.5
2006–07	5.3

स्रोत– वार्षिक रिपोर्ट, पशुपालन एवं डेयरी विभाग, कृषि भवन, नयी दिल्ली

दूध के उपयोग का अनुपात (प्रतिशत में)

तरल रूप में	46
घी, पनीर, दही	50
पाउडर, चीज आदि	4

स्रोत– वार्षिक रिपोर्ट, पशुपालन एवं डेयरी विभाग, कृषि भवन, नयी दिल्ली

बेरोजगारी दूर करने में दुग्ध सहकारी संघों ने सशक्त हथियार का कार्य किया। डेयरी आंदोलन ने ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाया। समाज के कमजोर वर्गों को भी आर्थिक

रूप से समर्थ बनाने में दुग्ध सहकारिताओं ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई। इस प्रकार देश में दुग्ध सहकारी संघ मानव संसाधन प्रबंध के प्रभावी साधन के रूप में उभरे हैं।

आपरेशन फ्लड

किसानों को आय अर्जक गतिविधियों में संलग्न करके विकास हेतु प्रेरित करने के लिए 1970 में आपरेशन फ्लड कार्यक्रम शुरू किया गया। आज दूध का राष्ट्रीय ग्रिड है जो 800 शहरों और कस्बों के उपभोक्ताओं को ताजे दूध की आपूर्ति करता है। इस कार्यक्रम ने दूध व्यवसाय से मध्यस्थों का उन्मूलन किया और दूध की कीमतों में मौसमी उतार–चढ़ाव को रोकने में सफलता प्राप्त की। इसका परिणाम यह हुआ कि दूध, दुग्ध उत्पाद व वितरण किसानों के लिए लाभ का सौदा बन गया। इस प्रकार किसानों को अपने परिश्रम का लाभ मिला जो पहले मध्यस्थों की जेब में चला जाता था।

यह कार्यक्रम गांवों में दूध उत्पादक सहकारिता की स्थापना और उन्हें आधुनिक तकनीक उपलब्ध कराने के लिए शुरू किया गया था। व्यापक रूप से इस कार्यक्रम का उदेश्य दूध उत्पादन बढ़ाना, ग्रामीण आय में वृद्धि करने और दूध विपणन का लाभ दुग्ध उत्पादकों, तक न कि मध्यस्थों तक पहुंचाना था।

अच्छी नस्ल के पशुधन से ज्यादा दूध प्राप्त होता है

प्रथम चरण (1970–1981)

आपरेशन फ्लड के प्रथम चरण का वित्त खाद्य कार्यक्रम के तहत यूरोपीय देशों द्वारा उपहारस्वरूप दिए गए दूध पाउडर और मक्खन के भारत में बिक्री से हुआ था। सहकारी डेयरी विकास केंद्र के संस्थापक अध्यक्ष डा. वर्गीज कुरियन ने यूरोपीय आर्थिक समुदाय द्वारा प्राप्त सहायता की विस्तृत रूपरेखा तैयार की थी। उन्होंने इस योजना के प्रशासनिक पहलुओं की समीक्षा की। योजना के प्रथम चरण में देश के 18 सर्वोत्तम दूध उत्पादक क्षेत्रों को देश के चार महानगरों (दिल्ली, मुम्बई, कोलकता और चेन्नई) के दूध बाजार के रूप में विकसित करना था।

द्वितीय चरण (1981–85)

आपरेशन फ्लड के द्वितीय चरण में 136 दूध उत्पादक क्षेत्रों को 290 शहरी क्षेत्रों से जोड़ने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। बाहरी सहायता से शुरू हुए इस आंदोलन ने 1985 के अंत तक 43,000 ग्राम सहकारिताओं का आत्मनिर्भर तंत्र स्थापित कर लिया था जिसमें 42. 5 लाख दूध उत्पादक सम्मिलित थे। दूध पाउडर उत्पादन 1985 के 22,000 टन से बढ़कर 1989 में 1,40,000 टन तक पहुंच गया। दुग्ध उत्पादक सहकारिताओं द्वारा दूध की सीधी बिक्री ने दुग्ध उत्पादक को प्रतिदिन लाखों लीटर तक पहुंचाने में सहायता दी।

तृतीय चरण (1985–96)

आपरेशन फ्लड के तीसरे चरण ने डेयरी सहकारिताओं को इस योग्य बनाया कि वे दूध उत्पादन व विपणन से जुड़े आधारभूत ढांचे को सुदृढ़ बनाएं ताकि अधिक से अधिक दूध का उत्पादन व विपणन हो सके। पशुओं की चिकित्सा संबंधी सुविधाएं भी विकसित की गईं।

गैर–आपरेशन फ्लड, पर्वतीय तथा पिछड़े क्षेत्रों में एकीकृत डेयरी विकास परियोजनाएं

यह योजना गैर–आपरेशन फ्लड पर्वतीय एवं पिछड़े क्षेत्रों में 100 प्रतिशत अनुदान सहायता के आधार पर 1993–94 में आरंभ की गई। इसका उद्देश्य तकनीकी सेवा प्रदान करके दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करना, दुग्ध उत्पादकों को लाभकारी मूल्य दिलाना, अतिरिक्त रोजगार के अवसर जुटाना तथा पिछड़े क्षेत्र के लोगों का सामाजिक– आर्थिक सुधार करना है। मार्च, 2005 में योजना में संशोधन किया गया और इसे गहन डेयरी विकास कार्यक्रम (आई.डी.डी.पी.) नाम दिया गया। यह योजना उन जिलों में क्रियान्वित की जा रही है जिन्हें आपरेशन फ्लड कार्यक्रम के दौरान डेयरी विकास कार्यकलाप के लिए 50 लाख रुपये से कम धनराशि मिली थी।

दूरगामी परिणाम

1996 में आपरेशन फ्लड का तीसरा चरण पूरा हुआ। इस समय देश के 170 प्रमुख दूध उत्पादक क्षेत्रों में 74,744 जिला सहकारी समितियों की स्थापना की गई। इसमें 93.14 लाख सदस्य थे। इस चरण में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे, वे समय पूर्व प्राप्त कर लिए गए। उदारीकरण के बाद निजी एजेंसियों द्वारा सहकारी गांवों में दूध की खरीद के कारण दूध खरीद का लक्ष्य प्रभावित हुआ। सुनिश्चित बाजार, कच्चे दूध का लाभकारी मूल्य, संतुलित पशुचारा और पशु चिकित्सा सुविधाएं दूध उत्पादन में सतत वृद्धि में सहायक होती हैं।

दूध के चर्चित ब्रांड

अमूल– गुजरात, विजया– आंध्र प्रदेश, वर्का– पंजाब, सरस– रांजस्थान, नंदिनी– कर्नाटक, मिल्मा– केरल, गोकुल– महाराष्ट्र, स्नेह– मध्य प्रदेश, आंचल– उत्तराचल, वीटा– हरियाणा।

डेयरी परिदृश्य 2010

आपरेशन फ्लड भारतीय डेयरी उद्योग के स्थिर एवं जर्जर स्थिति से निकालने का सुनियोजित प्रयास था। इस कार्यक्रम ने भारत में डेयरी विकास की गति को न केवल तीव्र किया अपितु भारत को विश्व के प्रथम दूध उत्पादक राष्ट्र के रूप में भी प्रतिष्ठित किया। इस उपलब्धि के बावजूद डेयरी उद्योग के समक्ष अनेक चुनौतियां हैं। इनमें प्रमुख हैं आपरेशन फ्लड के अंतर्गत सृजित ताने–बाने का प्रयोग करते हुए और अधिक सुदृढ़ बनाने के लिए नए रास्तों की खोज। इसी को ध्यान में रखकर परिदृश्य 2010 तैयार किया गया है।

परिदृश्य 2010 में चार क्षेत्रों पर बल दिया गया है। ये क्षेत्र हैं– सहकारी व्यवसाय का सुदृढ़ीकरण, उत्पादक वृद्धि, गुणवत्ता आश्वासन और राष्ट्रीय सूचना नेटवर्क का विकास। राज्य दुग्ध विपणन महासंघों एवं दुग्ध उत्पादक सहकारी संघों के शिल्पियों तथा महत्वपूर्ण लाभार्थियों ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्रों की पहचान की है। योजना का निर्माण करते समय किसानों के लाभों को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। एनडीडीबी ने योजना प्रक्रिया को गति दी है और परिदृश्य 2010 के क्रियान्वयन के लिए तकनीकी समर्थन व वित्तीय सहायता देगी।

परिदृश्य 2010 के लक्ष्य

- सहकारी संस्थाओं द्वारा ऑपरेशन फ्लड क्षेत्रों में तरल दूध संकलन में विपणन योग्य अधिशेष की 33 प्रतिशत (488 लाख किलोग्राम प्रतिदिन) वृद्धि। यह वृद्धि राष्ट्रीय स्तर पर उत्पादित दूध का 80 प्रतिशत है। इसका अर्थ है कि वर्ष 2010 तक तरल दूध संकल्प में चार गुनी वृद्धि।
- सहकारी संस्थाओं द्वारा तरल दूध बिक्री को 365 लाख किलोग्राम प्रतिदिन तक बढ़ाना। यह मेट्रो नगरों के बाजार अंश के 60 प्रतिशत के करीब होता है। इसका अर्थ है कि वर्ष 2010 तक तरल दूध विपणन में तीन गुना वृद्धि होगी।

राष्ट्रीय मवेशी पालन और भैंस प्रजनन परियोजना

आनुवांशिक सुधार हेतु एक प्रमुख कार्यक्रम राष्ट्रीय मवेशी पालन और भैंस प्रजनन परियोजना अक्टूबर 2000 में आरंभ किया गया। इसका क्रियान्वयन 10 वर्ष की अवधि में पांच–पांच वर्ष के दो चरणों में होगा। पहले चरण के लिए 402 करोड़ और दूसरे चरण के लिए 775.9 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। वर्तमान में 28 राज्य और एक केन्द्रशासित क्षेत्र इस परियोजना में भाग ले रहे हैं।

चारा विकास

पशुओं की उत्पादकता आहार और चारे की पौष्टिकता पर निर्भर करती है। कृषि भूमि पर खाद्यान्न, दलहन, तिलहन उगाने पर अधिक बल देने के कारण चारा फसल उगाने पर अधिक ध्यान नहीं दिया जा रहा है। कृषि अवशेषों के विविधोन्मुखी उपयोग के कारण पशुचारे की मांग व पूर्ति का अंतराल निरंतर बढ़ता जा रहा है। पशुपालन और डेयरी के लिए अध्ययन समूह के अनुसार देश में उपलब्ध पशुचारा केवल 46.7 प्रतिशत पशुओं की आवश्यता पूर्ति कर सकता है। पौष्टिक पशुचारे के काम आने वाले मोटे अनाज दूध के भाव मिल रहे हैं। जलवायु–जनित परिस्थितियों के हिसाब से देश के जिन राज्यों में दुग्ध विकास की परियोजनाएं संचालित की जा सकती हैं, वहां चारागाह है ही नहीं। हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, मेघालय, नगालैंड और अरूणाचल प्रदेश में पर्याप्त चारागाह तो हैं, लेकिन वहां दुधारू पशुओं के बजाय अन्य उत्पादों के लिए पशुपालन होता हैं। राजस्थान में 40 प्रतिशत और गुजरात में 30 प्रतिशत चारागाह हैं, जहां दुग्ध उद्योग अच्छी स्थिति में हैं। जलवायु परिवर्तन, सूखा व बाढ़ के बढ़ते प्रकोप के कारण पशुचारा पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। इसीलिए पशुचारा बैंक बनाने पर विचार किया जा रहा है ताकि आवश्यकता पड़ने पर देश के एक हिस्से से दूसरे हिस्से तक पशुचारे की आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके। इसके लिए सरकार दो योजनाओं पर कार्य कर रही है– केंद्रीय पशुचारा विकास संगठन की स्थापना और राज्यों को पशु आहार व चारा विकास के लिए सहायता देना।

समस्याएं

श्वेत क्रांति के माध्यम से देश ने दुग्ध उत्पादन में उल्लेखनीय सफलता अर्जित की है लेकिन श्वेत क्रांति की कई सीमाएं भी सामने आई हैं। इनमें प्रमुख कमियां निम्न हैं–

- ऐसे अनेक गांव हैं जिनमें दूध उत्पादन की क्षमता है लेकिन उन्हें आपरेशन फ्लड कार्यक्रम में शामिल नहीं किया गया है। कई दुग्ध संघ घाटे में चल रहे हैं। इसके अनेक कारण हैं जैसे दुग्ध संग्रहण का एकल स्थान जिससे यात्रा व प्रतीक्षा समय बढ़ जाता है, गांव की राजनीति, बेईमानी, नकदी फसलों पर बल देने के कारण पशुचारे की कमी, कई राज्यों का किसान नियंत्रण संबंधी आनंद पद्धति को अस्वीकार करना, प्रसंस्करण क्षमता का कम उपयोग आदि।
- दूध उत्पादकों को दूध की लाभकारी कीमत नहीं मिल पाती है। सहकारी कंपनियां जिस दूध को शहरों में 25 से 26 रु. प्रति लीटर बेचती हैं वही दूध वे किसानों से मात्र 13 से 14 रुपये लीटर की दर से खरीदती हैं।
- पशुचारे की कमी, बेहतर देखभाल, संकर किस्मों की कमी जैसे कारणों से भारत में दुधारू पशुओं के दूध देने की क्षमता कम है। भारत में दुधारू पशुओं की औसत क्षमता 1200 लीटर वार्षिक है जबकि विश्व औसत 2200 लीटर है।
- देश में पशुओं की स्वास्थ्य रक्षा सेवाओं की भारी कमी है। फलतः बड़ी संख्या में पशु संक्रामक रोगों के कारण मरते हैं।
- दुग्ध उत्पादन में व्यापक क्षेत्रीय विषमताएं विद्यमान है। पश्चिमी बंगाल, जम्मू–कश्मीर, उत्तर–पूर्वी भारत श्वेत क्रांति से लगभग अछूते हैं।
- देश भर में किसानों व पशुपालकों द्वारा उत्पादित कुल दूध के मात्र 15 प्रतिशत का ही प्रसंस्करण संगठित क्षेत्र की कंपनियों द्वारा किया जा रहा है।
- यद्यपि देश में दूध का उत्पादन बढ़ा है लेकिन जनसंख्या के हिसाब से पशुधन में कमी आई है। 1951 में जहां 40 करोड़ जनसंख्या पर 15.53 करोड़ पशु थे, वहीं 1992 में 93 करोड़ जनसंख्या पर 20.45 करोड़। 2005 में 110 करोड़ जनसंख्या पर मात्र 16 करोड़ पशु रह गए।

समग्रतः श्वेत क्रांति के माध्यम से देश दूध उत्पादन के शिखर पर पहुंच गया, लेकिन अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है। देश भर में सहकारिता का सर्वांगीण विकास नहीं हुआ है विशेषकर पूर्वी और उत्तर–पूर्वी भारत में। कई सहकारी संघ घाटे में हैं। इस कमी को तभी दूर किया जा सकता है जब सरकार सहकारी संघों को फलने–फूलने का अवसर प्रदान करे। सरकार को सहकारी संघों में राजनीतिक हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए। सहकारी संघों के नियमित रूप से चुनाव हों, उनमें लेखा बही का हिसाब–किताब रखा जाए और सहकारी संघों का प्रबंध पेशेवरों को सौंपा जाए। दूध उत्पादक किसानों के लिए यह संभव नहीं है कि वे शहर की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए वितरण का भी प्रबंधन कर सकें। इसलिए मांग और पूर्ति के बीच की कड़ी के लिए सहकारी दुग्ध संघों की भूमिका निर्विसाद है। श्वेत क्रांति की रोशनी देश के गांव–गांव व जन–जन तक तभी पहुंचेगी जब उत्पादक एवं उपभोक्ता के बीच सहकारी दूध समितियां अपना व्यापक जाल फैलाएंगी। इसका सफल उदाहरण है आनंद पद्धति।

यद्यपि दूध की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है लेकिन देश में पशुओं की संख्या न्यूनाधिक रूप से स्थिर है। यदि दूध का उत्पादन बढ़ाना है तो दुधारू पशुओं की गुणवत्ता सुधारनी होगी। दुधारू पशुओं की देशी नस्लों को अधिक दूध देने वाली विदेशी नस्लों के साथ संकरित किया जाए। इसके साथ ही पशुपालन क्षेत्र में अनुसंधान व विकास को बढ़ावा दिया जाए। इसी से भारत में श्वेत क्रांति सदाबहार क्रांति बनी रहेगी अन्यथा वह भी हरित क्रांति की भांति असमय दम तोड़ देगी।

(लेखक कृषि विषयक स्वतंत्र लेखक हैं)
ई–मेल : rkdo1972@yahoo.com

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

सिंथेटिक दूध – समस्या और समाधान

डॉ. सविता जैन

सिंथेटिक दूध जिसे कृत्रिम/मिलावटी दूध भी कहा जाता है, के बारे में आजकल समूचे भारत में लोगों के मन में अज्ञात भय व्याप्त है। यह दूध अब शहरों से गांवों की ओर भी जाने लगा है। एक तरफ जहां भारत दुनिया का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश बन गया है वहीं वह संसार का पहला सिंथेटिक दूध पैदा करने वाला देश भी बनता जा रहा है।

एक अनुमानित रिपोर्ट के अनुसार हर रोज एक करोड़ लीटर सिंथेटिक दूध का उत्पादन व विक्रय देश के विभिन्न राज्यों में हो रहा हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली एवं मध्य प्रदेश में ग्वालियर एवं चम्बल संभाग में इसके बड़े स्तर पर उत्पादन एवं विक्रय किये जाने के बारे में काफी जानकारी मिली है। अहमदाबाद स्थित उपभोक्ता शिक्षण एवं अनुसंधान सोसाइटी के एक अध्ययन में देश के विभिन्न हिस्सों में दुग्ध के 28 लोकप्रिय ब्राण्डों में विभिन्न बैक्टीरिया पाये गये हैं जो स्वास्थ्य पर गम्भीर दुष्प्रभाव डाल सकते हैं। भारतीय पशुधन संसाधन विकास प्रतिष्ठान के प्रबंध न्यासी लक्ष्मी नारायण मोदी के अनुसार राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में भारतीय डेयरी संघ द्वारा कराये गये शोध कार्यों से पुष्ट हुआ है कि दूध में घातक रसायनों की मिलावट धड़ल्ले से जारी है। यहां तक कि सरकार द्वारा संचालित डेयरियों में भी मिलावट के मामले सामने आये हैं।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद द्वारा एक मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए प्रतिदिन कम से कम 280 ग्राम दूध एवं दुग्ध पदार्थों का सेवन आवश्यक माना गया है। भारत में स्वतंत्रता के बाद वर्ष 1970 से राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के माध्यम से शुरू हुई श्वेत क्रांति आपरेशन फ्लड परियोजना के विभिन्न चरणों के फलस्वरूप दूध एवं दुग्ध पदार्थों के उत्पादन में देश में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है जोकि तालिका में दर्शायी गयी है।

भारत में दुग्ध उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत दूध उपलब्धता

क्रमांक	वर्ष	दूध उत्पादन (करोड़ टन)	प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत दुग्ध उपलब्धता (ग्राम में)
1	1950–51	1.74	132
2	1960–61	2.07	126
3	1970–71	2.10	112
4	1980–81	3.16	128
5	1990–91	5.64	178
6	2000–01	7.75	196
7	2005–06	8.01	199

स्रोत : कैपिटल मार्केट डेयरी उद्योग विशेषांक

तालिका से स्पष्ट है कि जहां वर्ष 1950–51 में भारत में दूध का वार्षिक उत्पादन 1.74 करोड़ टन था जो बढ़कर 2005–06 में पांच गुना से भी अधिक हो गया जिसके कारण भारत आज विश्व में दूध उत्पादन के क्षेत्र में अमेरिका को पीछे छोड़कर प्रथम स्थान पर पहुंच गया है एवं दूध उत्पादन के क्षेत्र में आज हम आत्मनिर्भर हो गये हैं। इस प्रकार दूध उत्पादन के क्षेत्र में तीव्र वृद्धि होने एवं आत्मनिर्भर होने के बाद भी सिंथेटिक दूध का निर्माण डेयरी उद्योग के समक्ष एक गम्भीर समस्या बनकर उभरा है जिससे आम उपभोक्ता वर्ग का विश्वास डेयरी उद्योग से उठ रहा है और इन डेयरियों से उत्पादित दूध एवं दूध पदार्थों का उपभोग करने में उपभोक्ता हिचकिचा रहा है चूंकि डेयरी उद्योग भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है जिससे करोड़ों ग्रामीण दुग्ध उत्पादक किसान एवं उपभोक्ता जुड़े हुए रहते हैं। अतः इस समस्या का जल्द से जल्द निराकरण किया जाना जरूरी है।

सिंथेटिक दूध क्या है ?

गाय एवं भैंस से प्राप्त प्राकृतिक दूध में से क्रीम सेपरेटर मशीन द्वारा क्रीम अथवा चिकनाई या वसा निकाल ली जाती है। इससे प्राप्त सपरेटा दूध को पुनः क्रीमयुक्त एवं झागदार बनाने के लिए उसमें यूरिया, डिटरजेंट, कास्टिक सोडा, स्टार्च ऑयल, ग्लूकोज़, शेम्पू, सफेद पेंट, हाईड्रोजन पराक्साइड आदि वस्तुएं मिलाई जाती हैं जिनका प्रयोग स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त घातक है। इसके अतिरिक्त स्किम मिल्क पाउडर में भी उपरोक्त वस्तुएं मिलाकर सिन्थेटिक दूध का निर्माण किया जा रहा है। साथ ही दूध की मात्रा बढ़ाने के लिए चाक एवं खड़िया मिट्टी का भी प्रयोग किया जाता है।

सिंथेटिक दूध के उपयोग से हानियां

सिंथेटिक दूध एवं दुग्ध पदार्थों के सेवन से चिकित्सकों के अनुसार मानव शरीर पर गम्भीर दुष्प्रभाव पड़ता है जिसके फलस्वरूप आंखों में सूजन, यकृत तथा गुर्दे प्रभावित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त गर्भवती महिलाओं, हृदयरोग एवं उच्च ताप रोगियों के लिए यह तुरन्त मृत्यु आमंत्रण बन जाता है। साथ ही बच्चों के

लिए यह दूध अत्यन्त हानिकारक होता है। इसके लगातार उपभोग से मानव शरीर बीमारियों का घर बन जाता है।

सुझाव

स्वस्थ समाज एवं राष्ट्र के विकास में वहां के लोगों की भूमिका सबसे अधिक होती है और उनका स्वस्थ, जागरुक तथा कर्त्तव्यनिष्ठ होना आवश्यक है। अतः सिंथेटिक दूध एवं इसके उपयोग से होने वाली हानियों से बचाव के लिए निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान दिया जाना चाहिए :

- देश की समूची आबादी को प्रचार–प्रसार के माध्यम से सिंथेटिक दूध की जांच की सरल विधि की जानकारी दी जानी चाहिए जिसमें टेलीविजन, रेडियो, समाचार–पत्र, होर्डिंग एवं उपभोक्ता जागृति शिविर प्रमुख माध्यम हैं।
- शहरों एवं महानगरों में खुले दूध की बिक्री पर पूर्ण प्रतिबंध लगवाकर पैकेजिंग प्रणाली को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। साथ ही राज्य शासन के डेयरी विकास विभाग और खाद्य एवं आपूर्ति विभाग द्वारा इन पैकेटों की नियमित एवं आकस्मिक जांच की जानी चाहिए।
- यद्यपि शासन द्वारा बनाया गया खाद्य अपमिश्रण रोकथाम अधिनियम सिन्थेटिक दूध के निर्माण को रोकने में पूर्ण रूप से असफल रहा है अतः जनहित एवं राष्ट्रहित में देश में स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने वाले दोषियों को कड़ी सजा दिलाने के लिए कठोर दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए।
- ग्राम, तहसील एवं जिला स्तर पर सिन्थेटिक दूध की रोकथाम के लिए स्थानीय प्रशासनिक अधिकारी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जानी चाहिए जो दूध विक्रेताओं, निजी डेयरी एवं शासकीय डेयरी पर पूर्ण नियंत्रण रखें और उनके द्वारा विक्रित दुग्ध नमूनों की जांच आवश्यक रूप से करवाती रहे।
- स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायतों/जनपद पंचायतों/जिला पंचायतों में गठित जन–भागीदारी समिति के माध्यम से माह में एक बार उपभोक्ताओं को जनचेतना अभियान एवं जन–जागरुकता शिविर का आयोजन किया जाना चाहिए जिसमें सिंथेटिक दूध के बारे में मिली शिकायतों एवं सुझावों पर विचार किया जायेगा। साथ ही राज्य शासन के माध्यम से स्थानीय स्तर पर ही घरेलू महिलाओं को सिंथेटिक दूध की जांच का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

सिंथेटिक दुग्ध एक मीठा जहर है जिससे तत्काल मौत नहीं हो सकती लेकिन यह धीरे–धीरे शरीर को बीमारियों का घर बना देता है। श्वेत क्रांति के फलस्वरूप भारत में विभिन्न प्रकार के दुग्ध एवं दूध पदार्थों के बनाने एवं संसाधित करने की नयी मशीनें बनी जिसका दुरुपयोग कुछ निजी व स्वार्थी दुग्ध उत्पादक मुनाफाखोर एवं निजी डेयरियां दूध की मांग एवं आपूर्ति करने के लिए कर रही हैं, ऐसा प्रायः दूध की मांग और आपूर्ति में अन्तर के कारण होता है। अतः शासन से अपेक्षा है कि दूध की कमी वाले क्षेत्र में सिंथेटिक दुग्ध के निर्माण एवं प्रयोग पर नियंत्रण किया जाना चाहिए।

(लेखिका शास. स्ना. महाविद्यालय दमोह, मध्य प्रदेश में अर्थशास्त्र की विभागाध्यक्ष हैं।)

इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर

डाक विभाग ने मनीआर्डर इलेक्ट्रानिक ढंग से भेजना शुरू कर दिया है। इससे ग्राहकों का पैसा गंतव्य–स्थल पर बहुत जल्दी पहुंच सकेगा। इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर से ग्राहकों को अधिक कुशल और बेहतर किस्म की सेवा उपलब्ध होगी। इलेक्ट्रानिक तरीके से मनीआर्डर भेजने का ग्राहकों को कोई अलग से पैसा नहीं देना होगा। शुरू में देश के करीब 2500 डाकघरों में यह सुविधा उपलब्ध कराई गई है। यह पहल डाकघर के कामकाज में परिवर्तन लाने और आम आदमी के लिए विश्व के द्वार खोलने संबंधी सरकार द्वारा जारी प्रयासों का एक हिस्सा है। इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर की बुकिंग सुविधा उन डाकघरों से विभिन्न चरणों में उपलब्ध कराई जाएगी जहां व्यापक क्षेत्र संबद्धता या ब्राडबैंड संबद्धता उपलब्ध है। संबद्ध डाकघर अन्य संबद्ध डाकघरों के लिए इलेक्ट्रानिक तरीके से मनीआर्डर बुक करेगा, जिनके उनके पास खाते होंगे इससे मनीआर्डरों को मूल रूप में भेजने की प्रक्रिया भी समाप्त हो जाएगी।

इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर भेजने का शुल्क वही होगा जो सामान्य मनीआर्डर भेजने का होता है। शुरू में यह सुविधा संबद्ध प्रधान डाकघरों और उप डाकघरों के बीच होगी। संबद्धता का विस्तार होने पर सभी प्रधान डाकघरों और महत्वपूर्ण उप डाकघरों में यह सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी। मनीआर्डर सॉफ्टवेयर का परीक्षण नई दिल्ली प्रधान कार्यालय, बंगलौर जीपीओ, मैसूर प्रधान कार्यालय, इंदौर जीपीओ और तिरुचिरापल्ली प्रधान कार्यालय में किया गया था। तथापि देश में मनीआर्डर भेजने की मौजूदा सेवा भी पहले की तरह डाकघरों में उपलब्ध रहेगी। (पसूका)

अहिंसा
राष्ट्रपिता का संदेश
दिल्ली सरकार
दिल्ली टीम – स्वप्न करें साकार
सूचना एवं प्रचार निदेशालय
भागीदारी
नागरिक सरकार साझेदारी
DIP/1367/08-09
विशेष सार्वजनिक कार्यक्रमः
अहिंसा दिवस पर शांति पदयात्राः वियतनाम के बौद्ध आध्यात्मिक नेता श्री तिक न्यात हन्ह के साथ दिल्ली की मुख्यमंत्री श्रीमती शीला दीक्षित
दिनांकः 2 अक्टूबर, स्थानः राजपथ पर विजय चौक से इंडिया गेट, समयः सांध्य 5.30 बजे
KH-11/08/04

बाल श्रमः समस्या और निदान

(14 नवम्बर बाल दिवस पर विशेष)

डॉ. अनिता मोदी

किसी भी राष्ट्र के विकास एवं प्रगति में बच्चों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कहा भी गया है "बच्चे देश के भावी कर्णधार हैं।" विकास प्रक्रिया में बालकों के महत्व को रेखांकित करते हुए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने बच्चों को 'राष्ट्र के पिता' की संज्ञा दी है। अतः बालकों का समुचित शारीरिक, मानसिक व शैक्षिक विकास करके ही वास्तविक अर्थों में विकास की संकल्पना को पूरा किया जाना संभव है।

आज सारा विश्व बाल श्रम जैसी ज्वलंत समस्या से जूझ रहा है। संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय बाल संकट कोष (यूनिसेफ) की रिपोर्ट 2005 में यह चिन्ताजनक तथ्य प्रकट किया गया है कि विश्व में बाल श्रमिकों की संख्या 24.6 करोड़ है जिनमें से 15.2 करोड़ एशिया, 7.6 करोड़ अफ्रीका तथा शेष 1.8 करोड़ लेटिन अमेरिकी देशों व अन्य देशों में कार्यरत हैं। विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में यह समस्या अधिक गंभीर एवं भयावह है, इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का यह अनुमान है कि विश्व के कुल बाल श्रमिकों में से आधे बाल श्रमिक भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, नेपाल व श्रीलंका जैसे विकासशील देशों में हैं। विभिन्न देशों एवं एजेंसियों ने बाल श्रम को अलग–अलग ढंग से परिभाषित किया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 18 वर्ष से कम आयु के श्रमिक को बाल–श्रमिक की श्रेणी में रखा है जबकि अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 15 वर्ष तक के श्रमिक को बाल मजदूर माना है। ब्रिटेन में 13 वर्ष से कम, अमेरिका में 12 वर्ष से कम तथा भारत में 14 वर्ष से कम आयु के श्रमिकों को 'बाल श्रमिक' माना गया है।

बाल श्रमिकों की समस्या के लिए जिम्मेदार कौन ?

हमारा देश भी 'बाल श्रम' जैसी जटिल सामाजिक–आर्थिक समस्या से अछूता नहीं है। 'बाल विश्व सम्मेलन' में यह चिंताजनक निष्कर्ष निकाला गया है कि बाल श्रम के दृष्टिकोण से भारत की स्थिति शोचनीय व विचारणीय है। विश्व के लगभग 25 करोड़ बाल श्रमिकों में से सर्वाधिक लगभग 10 करोड़ अकेले भारत में हैं। बाल श्रमिकों की इतनी विशाल संख्या देश में विकास के नाम पर कलंक है। ये मजदूर बच्चे अपना 'बचपन' भुलाकर होटल, ढाबे, कारखानों, खेतों या घरों में दिन–रात अथक परिश्रम करते हैं। दुखद तथ्य है कि दिन–रात अथक मेहनत करने के बावजूद इन अबोध बच्चों को न तो पूरी मजदूरी मिलती है एवं मालिकों की डांट–फटकार, मार, अपमान, तिरस्कार एवं अन्य यातनाएं भी झेलनी पड़ती हैं। ये बाल–मजदूर शिक्षा, स्वास्थ्य, खेल व मनोरंजन से कोसों दूर हैं।

देश में बाल श्रमिकों की संख्या के बारे में विभिन्न अनुमान प्रस्तुत किये गये हैं। भारतीय जनगणना के अनुसार वर्ष 1981 में बाल श्रमिकों की संख्या 1.36 करोड़, 1991 में 1.13 करोड़ तथा वर्ष 2001 में 1.26 करोड़ थी। जनगणना 2001 में यह बताया गया है कि सर्वाधिक बाल मजदूर 19 लाख उत्तर प्रदेश में पाये गये हैं। तत्पश्चात आंध्र प्रदेश में 13.63 लाख, राजस्थान में 12.62 लाख तथा बिहार में 11.1 लाख बाल श्रमिक दर्ज किये गये। सबसे कम बाल श्रमिकों की संख्या मात्र 27 लक्षदीप में आकलित की गई है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के अनुसार देश में बाल श्रमिकों की संख्या 104 लाख है जिसमें से 80 प्रतिशत बच्चे खेती में तथा शेष 20 प्रतिशत में 1.50 लाख माचिस उद्योग, 50 हजार आतिश उद्योग

में तथा 50 हजार कालीन उद्योग में कार्यरत हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने यह अनुमान लगाया है कि भारत में 1.26 करोड़ बच्चे पूर्णकालिक एवं 1.05 करोड़ बच्चे अंशकालीन श्रमिक हैं। ऑपरेशन रिसर्च ग्रुप ने देश में बाल श्रमिकों की संख्या 5 करोड़ बताई जबकि 'कन्सर्न ऑफ चाइल्ड लेबर' ने देश में 10 करोड़ बाल श्रमिकों का अनुमान लगाया है। उपर्युक्त विविध आकलनों से यह स्पष्ट है कि देश की 'बाल श्रम' के दृष्टिकोण से स्थिति चिंताजनक है।

निर्धनता, बेरोजगारी, निरक्षरता, जनसंख्या वृद्धि, जागरुकता की कमी तथा परिवार में सदस्यों की अधिक संख्या जैसे तत्व ही मुख्य रूप से 'बाल श्रम' की समस्या के लिए जिम्मेदार हैं। गरीबी एवं बाल श्रम का 'चोली–दामन' का संबंध है। गरीब वर्ग बड़े परिवार के भरण–पोषण करने हेतु मजबूरी में बच्चों से काम करवाने के लिए विवश हैं। बाल विश्व सम्मेलन में भी 'बाल श्रम' की समस्या के लिए गरीबी को ही मुख्य रूप से उत्तरदायी ठहराया गया है। इस सम्मेलन में यह चिंताजनक तथ्य भी प्रकट किया गया है कि विकासशील देशों में 50 प्रतिशत व्यक्तियों की आमदनी प्रतिदिन एक डॉलर से कम है। अतः निम्न आय स्तर व गरीबी की वजह से बाल श्रम जैसी ज्वलंत समस्या देश के लिए अभिशाप साबित हो रही है। इसके अतिरिक्त अशिक्षित अभिभावक शिक्षा के महत्व से अवगत नहीं होने के कारण अपने बच्चों को स्कूल भेजने एवं उनको शिक्षित करने के दृष्टिकोण से असफल रहते हैं। कुछ अभिभावक केवल अल्पकालीन अल्प लाभों के लिए अपने बच्चों का भविष्य दांव पर लगा देते हैं। शिक्षा प्रणाली में रोचकता, रोजगारपरकता व व्यावसायिकता का अभाव, अध्यापकों का नकारात्मक रुख एवं शिक्षण की जटिल एवं नीरस पद्धति जैसे तत्वों की वजह से बालक भी बीच में ही पढ़ाई छोड़कर कमाऊपूत बन जाते हैं। कम मजदूरी व अधिक घंटे काम, बाल मजदूरों पर सहज व शीघ्र नियंत्रण संभव होने के कारण नियोक्ता भी बाल श्रमिकों को अधिक प्राथमिकता देते हैं।

> श्रमिक के रूप में कार्यरत बच्चों का नैसर्गिक, मानसिक व शारीरिक विकास अवरुद्ध हो जाता है जो देश के विकास में बाधक है। विचारणीय प्रश्न यह भी है कि बाल श्रमिकों को जिन कार्यस्थलों पर, जिन परिस्थितियों में कार्य करना पड़ता है, वे भयावह एवं चिंताजनक हैं। फिरोजाबाद के चूड़ी उद्योग एवं मेघालय की कांच की खानों में उच्च तापमानयुक्त भट्टियों पर कार्य करते हुए बच्चों का कोमल शरीर झुलस जाता है, दरियों, गलीचों व कालीनों की बुनाई करते हुए बच्चों की नाजुक अंगुलियां जकड़ जाती हैं। कारखानों में कार्य करते हुये बच्चे घातक रासायनिक तत्वों की मौजूदगी के कारण अस्थमा, चर्मरोग, टी.बी. व कैंसर जैसे जानलेवा रोगों के शिकार बन जाते हैं। यही नहीं, माचिस व आतिश उद्योगों में कार्यरत बच्चों के जीवन पर हमेशा मौत की काली छाया मंडराती रहती है। कार्यस्थलों पर आधारभूत सुविधाओं की कमी, हवा, रोशनी की पर्याप्त व्यवस्था नहीं होने के दुष्परिणाम बच्चों को ही उठाने पड़ते हैं। ऐसी विकट परिस्थितियों में कार्यरत ये अबोध बच्चे किसी न किसी बीमारी से ग्रस्त होकर अपना स्वास्थ्य चौपट करते हुए अपने भविष्य को गर्त में धकेलने के लिए बाध्य हैं।

हमारे देश में स्वतंत्रता से पूर्व ही इस कलंक को मिटाने के लिए अनवरत प्रयास किये जा रहे हैं। सर्वप्रथम कारखाना अधिनियम, 1881 के अंतर्गत सात वर्ष से कम आयु के बच्चे से कार्य करवाना अवैधानिक घोषित किया गया। तत्पश्चात् 1901 में खदान अधिनियम, 1911 में फैक्ट्री अधिनियम, 1926 में संशोधित फैक्ट्री अधिनियम, 1931 में भारतीय बन्दरगाह अधिनियम (संशोधित), 1933 में बाल बंधुआ श्रम अधिनियम, 1934 में फैक्ट्री अधिनियम, 1938 में बाल रोजगार अधिनियम, 1948 में फैक्ट्री अधिनियम, 1951 में बाल रोजगार (संशोधित) अधिनियम व बालश्रम अधिनियम, 1952 में खदान अधिनियम, 1978 में बाल रोजगार अधिनियम (संशोधित) एवं 1986 में बाल श्रम (नियमन एवं उन्मूलन) अधिनियम पारित किये गये। स्वतंत्रता के पश्चात सरकार ने संविधान में संशोधनों के माध्यम से बच्चों के विकास हेतु संवैधानिक एवं कानूनी प्रावधान किये हैं।

संविधान के अनुच्छेद 24 में स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे को किसी भी कारखाने, खान या खतरनाक व्यवसाय में नियोजित नहीं किया जा सकता है। बच्चों के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से संविधान के अनुच्छेद 45 में 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए सरकार द्वारा निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा व्यवस्था का प्रावधान किया गया है। इसी भांति, संविधान के 86वें संशोधन, 2002 के माध्यम से बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है। संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत भी बाल श्रम पर रोक लगाते हुये यह प्रावधान किया गया है कि सरकार बच्चों के बचपन की रक्षा करे तथा स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से अनुचित कार्यों में उनको संलग्न नहीं करें। निसंदेह रूप से, संविधान में उल्लेखित इन सब प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य बच्चों के सर्वांगीण, स्वतंत्र एवं गरिमायुक्त विकास को सुनिश्चित करना है।

बाल श्रम निषेध एवं नियमन अधिनियम 1986 के माध्यम से

14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को खतरनाक उद्योगों तथा भारी उद्योगों में कार्य करने को प्रतिबंधित किया गया है। इसी भांति राष्ट्रीय बाल श्रम नीति, 1986 का मूलभूत उद्देश्य खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों के पुनर्वास की व्यवस्था करना है। यही नहीं विपत्तिग्रस्त, अनाथ, बेसहारा बालकों को सहायता उपलब्ध कराने के लिए 'चाइल्ड लाइन' की स्थापना की गई है। वर्तमान में यह चाइल्ड लाइन सेवा निशुल्क टेलीफोन नंबर 1098 पर चौबीस घंटे उपलब्ध है। देश में अनेक बाल श्रमिक परियोजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं जिनका उद्देश्य बाल मजदूरों की शिक्षा एवं रोजगारपरक प्रशिक्षण की व्यवस्था करते हुए उनको पुनर्वासित करना है। ज्ञातव्य है कि वर्ष 1994 में कालीन बुनाई, पत्थर खनन, माचिस निर्माण व पटाखा उद्योग में संलग्न 20 लाख श्रमिकों को वहां से हटाकर उनके लिए स्कूलों की व्यवस्था करने हेतु 850 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। हाल ही में, सरकार ने 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को घरों, ढाबों, रेस्टोरेंट, होटलों, चाय की थड़ियों, रिसोर्टो, हेल्थ क्लबों, मनोरंजन केंद्रों व अन्य हानिकारक कार्यों पर रखने के लिए रोक लगाई है। इस अधिनियम का उल्लंघन करने पर तीन माह से लेकर एक वर्ष तक की कैद तथा 20 हजार रुपये जुर्माना लगाये जाने का प्रावधान है।

बाल श्रमिकों के पुनर्वास हेतु 'इंडस' (इण्डोयूएस) नामक एक संयुक्त परियोजना का श्री गणेश भारत व अमेरिका के श्रम विभाग द्वारा किया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य जोखिम परिपूर्ण उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों को कार्यमुक्त करके उनके पुनर्वास की व्यवस्था करना है। इस योजना से 80,000 बच्चे लाभान्वित हो चुके हैं। संकटग्रस्त बच्चों एवं गैर–कानूनी कृत्यों में संलग्न बच्चों को संरक्षण देने के लिए आश्रयगृहों की स्थापना की गई है। बाल श्रमिकों के अभिभावकों को रोजगार प्रदान करने, उनके आय स्तर में वृद्धि करने के उद्देश्य से 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' एवं स्वंसहायता समूह का क्रियान्वयन प्राथमिकता के आधार पर किया जा रहा है। सरकार द्वारा वृहद् स्तर पर संचालित मध्याह्न भोजन व्यवस्था भी कुछ सीमा तक बाल श्रम की समस्या को नियंत्रित कर रही है। इसी भांति सर्वशिक्षा अभियान जैसा कार्यक्रम भी बच्चों की शिक्षा को सुनिश्चित करते हुए बाल श्रम उन्मूलन की दिशा में कदम बढ़ा रहा है। बाल मजदूरी उन्मूलन प्राधिकरण भी बाल श्रम की प्रथा को रोकने एवं उनकी शिक्षा व विकास हेतु प्रयासरत है। सरकार ने बाल श्रमिकों की शिक्षा व्यवस्था हेतु विशेष विद्यालयों की स्थापना भी की है।

'बाल श्रम' की समस्या से निजात पाने हेतु केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय चार्टर 2003 बनाया जिसका उद्देश्य बच्चों में अपने संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरुकता उत्पन्न करना है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भी बाल श्रम समस्या के समाधान हेतु सतत प्रयासरत है। देश में गठित 'राष्ट्रीय बाल आयोग' भी बच्चों के विकास और उनसे संबंधित समस्याओं के निराकरण में प्रभावी भूमिका निभा रहा है। 'बाल श्रम' जैसी वैश्विक समस्या के समाधान हेतु किए गए सक्रिय व प्रभावी प्रयासों के फलस्वरूप ही विश्व में व देश में इस समस्या को कुछ सीमा तक नियंत्रित किया जाना संभव हो पाया है। इसी सुखद तथ्य की ओर संकेत करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने वर्ष 2005 में अपनी रिपोर्ट में बताया है कि संपूर्ण विश्व में पहली बार इस समस्या में कमी आई है। इस रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि वर्ष 2000 से वर्ष 2004 के दौरान विश्व में बाल श्रमिकों की संख्या में 11 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई है। यही नहीं, खतरनाक कार्यों में संलग्न 5 से 17 आयु वर्ग के बच्चों की संख्या में 20 प्रतिशत की कमी आई है। उपर्युक्त संपूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट है कि बाल श्रम की समस्या के निराकरण में सरकार, स्वयंसेवी संगठनों एवं समाज के प्रत्येक नागरिक का योगदान अपेक्षित है। केवल कानून, अधिनियम या समितियों की सहायता से इस जटिल समस्या का समाधान संभव नहीं है।

'बाल श्रमिकों की फौज' न केवल देश की अर्थव्यवस्था पर कलंक है, अपितु विकास के मार्ग में भी अवरोधक है। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए इस समस्या के लिए उत्तरदायी मूलभूत कारणों–गरीबी, बेरोजगारी व जनसंख्या वृद्धि पर एक साथ कड़ा प्रहार करने की नितान्त आवश्यकता है। जब तक बाल श्रमिकों के परिवारों के भरण–पोषण का स्थायी समाधान नहीं होता है तब तक बाल श्रम से संबंधित सभी कानून, अधिनियम व आयोगों की सार्थकता संदिग्ध है। ऐसी स्थिति में रोजगार संवर्द्धन से संबंधित सभी योजनाओं व ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के प्रभावी क्रियान्वयन की दिशा में कठोर कदम उठाये जानें चाहिए। इसी भांति, जनसंख्या वृद्धि के नियंत्रण हेतु परिवार नियोजन कार्यक्रम, साक्षरता एवं जागरुकता जैसे अभियान को युद्धस्तर पर क्रियान्वित करने की महत्ती आवश्यकता है। कार्य करने के घंटे, कार्यस्थल पर उचित वातावरण एवं न्यूनतम मजदूरी जैसे प्रावधानों को भी व्यावहारिक रूप से अपनाने पर जोर देना चाहिये। 'बाल श्रम' की समस्या मानवीय संवेदना, सहानुभूति व सहभागिता के बल पर ही सुलझाई जा सकती है। अतः समाज के प्रत्येक सदस्य में बाल श्रमिकों के प्रति संवेदना जागृत कर दी जाए तो निश्चित रूप से इस समस्या का समाधान शीघ्र एवं स्थायी रूप से हो जायेगा।

(लेखिका जी.एस.एस. पीजी कॉलेज, चिड़ावा में अर्थशास्त्र विभाग की विभागाध्यक्ष हैं।)

ई–मेल : anita3modi@gmail.com

नक्सलवाद ग्रामीण विकास में रुकावट

डॉ. एस.के.मिश्रा

वर्तमान भारत वर्ष और भविष्य के भारत वर्ष को लेकर की जाने वाली चिंता गैरवाजिब नहीं कही जा सकती है। मौजूदा समय से लेकर आने वाले समय तक हमें सुरक्षा के दृष्टिकोण से सतर्क रहने की जरूरत है। सतर्कता भी ऐसी जो किसी दुश्मन देश से नहीं बल्कि हमारे अपने मुल्क में अंदरूनी रूप से पैदा होने वाली समस्याओं से है। इन समस्याओं में विशेष रूप से नक्सलवादी समस्या ने हमें विगत डेढ़ दशक से अधिक परेशान कर रखा है। नक्सलवादी समस्या से निपटने के लिए एक ऐसी सुविचारित उच्चस्तरीय योजना की जरूरत है जिससे कि नक्सलवादी विचारों के पनपने पर ही विराम लगाया जा सके और साथ ही राष्ट्र के विकास पर भी कोई विपरीत प्रभाव न पड़े।

वास्तव में नक्सलवाद का अर्थ राष्ट्रीय संपत्ति को क्षति पहुंचाना नहीं है, इसका मतलब सत्तासीन नेताओं अथवा पार्टी को नेस्तनाबूत करना भी नहीं है। गांव के सीधे–साधे व्यक्ति को जान से मारना अथवा कल–कारखानों को नुकसान पहुंचाकर कर्मचारियों की रोजी–रोटी छीनना भी नक्सलवाद की धारा में नहीं है। वस्तुतः नक्सलवाद एक आंदोलन है, एक मिशन है जिसका मकसद अधिकारों के लिए सचेत रहते हुए अपराधों के विरुद्ध आवाज बुलंद करना है। आज का नक्सलवाद अपने उद्देश्य से पूर्णतः भटक चुका है। यह गंभीर चिंतन का विषय है कि अपने आंदोलन के प्रारंभिक चरण में गांव–गरीब के हितैषी नक्सलवादी संगठन अचानक उन्हें ही क्यों मारने लगे? कहीं इस भटकन के पीछे राजनीतिक स्वार्थसिद्धि का तो हाथ नहीं? या फिर दिन–प्रतिदिन अमानवीय घटनाओं के पीछे कोई नक्सलवाद के नाम पर अपना उल्लू तो सीधा नहीं कर रहा है? देश के पुलिस संगठन से लेकर हर प्रकार के खोजी दस्तों की यह जवाबदारी है कि इसकी तह में जाने का प्रयास पूरी निष्ठा के साथ करने की प्रतिबद्धता दिखाये।

> नक्सलवादी या नक्सलवाद वर्तमान में अपने मिशन से भटकते देखे जा रहे हैं। आज से लगभग डेढ़ दशक पूर्व इन संगठनों द्वारा भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज बुलंद की जा रही थी और अधिकारियों द्वारा ग्रामीणों को परेशान करने का प्रतिरोध दिखाया जाता रहा है। किंतु आज की बदली परिस्थितियों में हम प्रतिदिन समाचार–पत्रों में पढ़ रहे हैं कि नक्सलियों द्वारा ग्रामीणों को घर से निकालकर पीटा गया अथवा गोलियों का शिकार बना दिया गया। खून–खराबे से कहीं दूर उद्देश्य के साथ बनाये गये संगठन प्रतिदिन खून से अपनी प्यास बुझा रहे हैं। नक्सलियों के मिशन में आये परिवर्तन के लिए कौन दोषी है?

नक्सलवादी संगठनों की स्थापना की कहानी भी काफी रोचकता लिए हुए है। इसके शुरुआती दौर में इसे एक छापामारी दस्ते के रूप में देखा गया और भ्रष्टाचार के समापन हेतु एक आंदोलन की तरह मजबूती प्रदान की गई। भारत, नेपाल और स्वतंत्रता से पूर्व के पाकिस्तान पर बसे 'नक्सलबाड़ी' गांव के नाम पर इस मिशन का नामकरण नक्सलवादी के रूप में हुआ। इस संगठन की शुरुआत आदिवासियों द्वारा भू–स्वामियों के द्वारा उठाई गई आवाज से जानी जाती है। आदिवासियों द्वारा उठाये गये हथियार के बाद गांव–गांव, गली–गली दावानल की तरह बढ़ चली। स्वतंत्रता प्राप्ति के 20 वर्ष के बाद भी किसान, श्रमिक और आदिवासी दमनचक्र से बाहर नहीं आ पाये थे यही कारण था कि समाजवाद की स्थापना का सपना संजोये एक वर्ग ने असंतुष्टों को इकट्ठा कर एक ऐसा संगठन बना डाला जो दमन को समाप्त कर एक स्वच्छ समाज के निर्माण के लिए आंदोलित हो उठा। इस आंदोलन में क्षेत्र विशेष के विद्वानों सहित बुद्धिमान और महाविद्यालयीन छात्र भी कूद पड़े।

ऐसा नहीं कि सामाजिक रूप से दबे–कुचलों के उद्धार के लिए शांति प्रयास नहीं किए गए हों। किंतु जब इस प्रकार के निवेदनों से बात न बन पाई तब सशस्त्र क्रांति को सबसे उपयुक्त तरीका मान नक्सलवादी संगठन ताकत के साथ उभरने लगे। छत्तीसगढ़ में सक्रिय नक्सलवादी संगठन ने अपना नामकरण उस प्रमुख नदी के नाम पर कर रखा है जो उनके ठिकाने के आसपास बह रही है। 'टाडा दलम' के नाम से गठित इस आंतकवादी संगठन ने प्रदेश शासन की नींद हराम कर रखी हैं। इनकी गतिविधियों के चलते आए दिन पुलिस प्रशासन विशेष अभियान में जुटा देखा जा सकता है। नक्सलवादी या नक्सलवाद वर्तमान में अपने मिशन से भटकते देखे जा रहे हैं। आज से लगभग डेढ़ दशक पूर्व इन संगठनों द्वारा भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज बुलंद की जा रही थी और अधिकारियों द्वारा ग्रामीणों को परेशान करने का प्रतिरोध दिखाया जाता रहा है। किंतु आज की बदली परिस्थितियों में हम प्रतिदिन समाचार–पत्रों में पढ़ रहे हैं कि नक्सलियों द्वारा ग्रामीणों को घर से निकालकर पीटा गया अथवा गोलियों का शिकार बना दिया गया। खून–खराबे से कहीं दूर

उद्देश्य के साथ बनाये गये संगठन प्रतिदिन खून से अपनी प्यास बुझा रहे हैं। नक्सलियों के मिशन में आये परिवर्तन के लिए कौन दोषी है? क्या राज्य सरकार द्वारा चलाया गया सलवा जुडूम नक्सलियों को बरगलाने का काम कर रहा है? या फिर नक्सलियों के नाम पर चोरी, डकैती करने वाले गिरोह उन्हें बदनाम कर रहे हैं? ये सारे अनुत्तरित प्रश्न प्रशासनिक स्तर पर विचारणीय होने चाहिए।

नक्सलवादी संगठनों द्वारा वर्तमान में मनुष्यता का त्याग कर दिया गया है। अब इनका मिशन भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ता दिखाई नहीं पड़ रहा है, बल्कि जनसमस्या को उनके द्वारा पहुंचाया जाने वाला कष्ट इनके प्रति नकारात्मक विचारधारा को जन्म दे रहा है। इन संगठनों द्वारा कभी किसी बस को लूट लिया जाता है तो कभी देश के विकास में सहयोग कर रही औद्योगिक इकाई को आग के हवाले कर दिया जा रहा है, तो कभी विद्युत जैसी अति आवश्यक सेवा को बाधित कर अंधेरे का साम्राज्य कायम किया जा रहा है। सबसे ज्यादा निंदनीय कार्य उनके द्वारा स्कूली बच्चों की प्रताड़ना के रूप में सामने आ रहा है। समाचार–पत्रों में प्रकाशित समाचार बता रहे हैं कि इनके संगठनों ने शिक्षा जैसे यज्ञ में समर्पित शाला भवनों को भी लैंडमाइंस बिछाकर उड़ा दिया है। नक्सली संगठनों द्वारा किए जा रहे ये सारे निंदक क्रियाकलाप समाज में इनके प्रति जहर बोने का काम कर रहे हैं। नक्सलवाद की बढ़ती घटनाओं के कारण दूर–दराज के क्षेत्रों में सरकार की विकास योजनाएं जरूरतमंद लोगों तक नहीं पहुंच पा रही हैं।

हर प्रकार की हिंसक घटनाओं से लेकर आपराधिक क्रियाकलापों पर नजर रखने वाले भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने भी स्वीकार किया है कि देश के प्रमुख राज्यों आंध्र– प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल के जिलों में नक्सलवाद सिर चढ़कर बोल रहा है। विगत कुछ वर्षों से यह भी देखा जा रहा है कि पीपुल्स वार और एमसीसीआई अपनी गतिविधियों को तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल में भी विकसित करने लगे हैं। इन संगठनों के प्रभावों के चलते क्षेत्र के बहुत बड़े भाग में हिंसा की वारदातों ने आम नागरिकों को विचलित कर रखा है। कुछ बड़े नक्सलवादी संगठनों ने आपसी एकीकरण के द्वारा स्वयं के पैर भी मजबूत किए हैं। इन विरोधी दस्तों द्वारा सीधे–साधे लोगों को लालच देकर अपने संगठन में भी शामिल किया जा रहा है। नेपाली माओवादियों से इनकी मिलीभगत भी स्थिति को गंभीर बनाये हुए है।

एक समय हमारा देश आतंकवाद के साये में सांसें ले रहा था, किंतु आतंकवाद पर लगाम कसते ही हमने नक्सलवादियों की ओर से पूर्णतः अपना ध्यान हटा लिया है, ऐसा प्रतीत होता है। यही कारण है कि आज नक्सलवादी संगठन ताकत के साथ खड़े हुए हैं। नक्सलवादियों की हिंसक घटनाओं में उत्तरोत्तर प्रगति किसी से छिपी नहीं है। इन संगठनों ने आधुनिक हथियार के साथ ही बम बनाने और इनके इस्तेमाल में भी महारत हासिल कर ली है। गृह मंत्रालय के एक अनुमान के अनुसार इस समय नक्सलवादी संगठन के पास विभिन्न प्रकार के दस हजार से ऊपर हथियार उपलब्ध हैं, जबकि एके 47 रायफलें और स्वचालित मशीनगनें इनकी पहुंच से बाहर नहीं हैं। इन संगठनों ने एक बड़े सैन्य कारखानों का रूप अख्तियार कर लिया है। इस प्रकार के आंदोलन से जुड़े संगठनों का पता लगाने के लिए कराये गये एक सर्वे में इस बात का खुलासा हुआ है कि इस संगठन से जुड़े आंदोलनकारियों ने 14 राज्यों के लगभग 200 जिलों में अपनी घुसपैठ बना ली है। आज से लगभग 4 वर्ष पूर्व इनके हौसलों को तब बुलंदी मिली जब पीपुल्स वार और माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर ऑफ इंडिया ने आपस में विलय करने का निश्चय किया। यही एकीकृत दल अब कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (माओवादी) के नाम से जाना जा रहा है।

आतंकवाद से लेकर नक्सलवाद तक हम इनकी गतिविधियों अथवा ठिकानों से अंजान नहीं रहे हैं। नक्सलियों के आयोजनों में नेताओं के शरीक होने की बातें अब आम बात हो गई हैं। जिस नेता का नक्सली संगठन से पुष्ट अनुबंध स्थापित हो जाता है वह नेता माओवादियों द्वारा लिखित धमकी भरा लाल पत्र गृह मंत्रालय को उपलब्ध करा स्वयं के लिए सुरक्षा गार्ड की मांग कर एक प्रकार से इन संगठनों द्वारा की जा रही हिसंक वारदातों से स्वयं को बचाने का अच्छा षड्यंत्र रच रहा है। क्या इस बात से इंकार किया जा सकता है कि इन्हें नेस्तनाबूत करने में हमारी सेना की सबसे छोटी बटालियन भी सक्षम सिद्ध होगी। नक्सलवादियों के खतरनाक इरादों से कहीं अधिक खतरा हमें भारतीय राजनीति के सिद्धहस्त कूटनीतिज्ञों से है, जो अपने मधुर संबंध मनुष्यता के दुश्मन बने इन संगठनों से बनाये बैठे हैं।

नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सूचना तंत्र को मजबूती प्रदान करने के बावजूद नक्सली गतिविधियां चरम पर हैं। एक बड़ी घटना में नक्सलियों ने अपने मंसूबे जाहिर करते हुए झारखंड के पूर्व मुख्यमंत्री बाबू लाल मरांडी के बेटे सहित लगभग 20 लोगों को मौत के घाट उतार दिया। मार्च 2007 में लगभग

300 नक्सलियों ने छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा क्षेत्र में रानी बोदली पुलिस चौकी पर हमलाकर उस पर कब्जा कर लिया। इसी तरह 4 मार्च को माओवादियों ने झारखंड मुक्ति मोर्चा के सांसद सुनील महतो की हत्या कर अपनी सक्रियता जाहिर कर दी थी। माओवादियों द्वारा अपने आक्रमण के तरीकों में भी समय-समय पर बदलाव किया जाता रहा है। उनके द्वारा बड़े औद्योगिक घरानों को भी निशाना बनाया जा रहा है। नक्सलवादियों ने विशेष रूप से 8 प्रदेशों और 42 जिलों को अपना केंद्र बना रखा है। वे प्रदेश और जिले हैं :-

नक्सलवाद से प्रभावित राज्य

राज्य	प्रभावित जिले
मध्य प्रदेश	बालाघाट, डिंडोली तथा मंडला
महाराष्ट्र	गढ़चिरौली, भंडारा और चंद्रपुर
आंध्र प्रदेश	उत्तरी और दक्षिणी तेलंगाना, रायलसीमा, उत्तर और दक्षिणी तटीय जिले
बिहार	पटना, गया, औरंगाबाद, जहानाबाद, रोहतास, बक्सर, सहरसा, खगड़िया, बांका और जमुई
झारखंड	पलामू, गढ़वा, लातेहर, गुमला, चतरा, हजारीबाग और कोडरमा
पश्चिम बंगाल	मिदनापुर, पुरूलिया और बांकुड़ा
उड़ीसा	मलकनगिरी, कोरापुट, गजपति, रायगढ़, नवरंगपुर और मयूरभंज
छत्तीसगढ़	जगदलपुर, बस्तर, कांकेर, राजनांदगांव, दंतेवाड़ा, सरगुजा कवर्धा और जशपुर

विशेषज्ञ समिति की अंतिम बैठक, जो नई दिल्ली में 14 एवं 15 मार्च 2008 को संपन्न हुई, उसमें विचार प्रकट किया गया कि विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक विकास से संबंधित रिपोर्ट पर क्षेत्रीय, राज्य एवं केंद्रीय स्तरों पर व्यापक विचार विमर्श के बाद आम सहमति से एकमुश्त नीतिगत निर्णय लिया जाना चाहिए ताकि हिंसा से प्रभावित क्षेत्रों की सामाजिक, आर्थिक कमियों को दूर किया जा सके। इस तथ्य से कोई इंकार नहीं कर सकता है कि 'नक्सली के नाम पर जो कुछ हो रहा है वह समाज के विभिन्न वर्गों का बुनियादी सुविधाओं से वंचित रहने का परिणाम है। प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों को चाहिए कि नक्सलवादियों से निपटने हेतु निम्न सुझावों पर अमल करें।'

- नक्सलियों से मुकाबला करने के लिए समाज के ऐसे वर्गों को प्रोत्साहित किया जाए जिन्हें स्थानीय आदिवासियों के विषय में जानकारी के साथ-साथ सहानुभूति भी हो।
- नक्सली हमलों तथा सरकारी एजेंसियों से प्रभावित लोगों से संपर्क करने वाले नागरिकों, संघों तथा मीडिया के लोगों को परेशान करने का गलत परिणाम निकलता है, इसलिए ऐसे माध्यमों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि सरकार को अपने प्रयासों के परिणामों का सही आंकलन करने में मदद मिले।
- नक्सलियों के आधार को कमजोर करने के लिए जरूरी है कि आम लोगों को एकजुट किया जाये।
- राज्य के हितों तथा आदिवासियों के हितों के बीच के अंतर को पाटने के लिए रचनात्मक नीतियां अपनाई जानी चाहिए।
- दलितों, आदिवासियों, महिलाओं एवं गरीबों के उत्थान का काम मात्र कुछ कानूनों से जोड़कर नहीं बल्कि एक शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक प्रणाली विकसित कर किया जाना चाहिए।
- मानवाधिकारों के उल्लंघन की शिकायतों पर गौर किया जाना चाहिए और उन पर संज्ञान लेकर कार्यवाही होनी चाहिए।

विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि बीते 2007 वर्ष में सर्वाधिक घटनाएं और मौतें छत्तीसगढ़ और झारखंड में हुई। 67.46 प्रतिशत नक्सली घटना में लगभग 75.98 प्रतिशत लोग दोनों प्रदेशों में कालकवलित हुए हैं। सन् 2003 से लेकर 2007 तक के पांच वर्षों में नक्सली वारदातों में निरपराध लोगों को भी मौत के घाट उतारा गया है। नक्सली वारदातों में हुई मौतों को निम्न तालिका द्वारा जाना जा सकता है।

वर्ष	कुल घटनाएं	मारे गए सामान्य जन	मारे गए पुलिस जवान	मारे गए नक्सली
2003	1597	410	105	216
2004	1533	466	100	87
2005	1608	524	153	225
2006	1509	521	157	272
2007	842	220	138	93

छत्तीसगढ़ प्रदेश निर्माण के साथ ही अधिकांश नक्सल-प्रभावित क्षेत्र छत्तीसगढ़ के हिस्से में आ गए हैं। वर्तमान मध्य प्रदेश के बालाघाट, मंडला, डिंडोरी और सीधी जिले ही नक्सलियों के प्रभाव में हैं जबकि छत्तीसगढ़ में नक्सली हिंसा का सबसे अधिक दुष्प्रभाव बस्तर जिला में देखा जा रहा है। इसके साथ ही

राजनांदगांव, जशपुर और सरगुजा जिले भी नक्सलवादी संगठनों के प्रभाव से द्रवित है। नक्सलवादियों की सक्रियता के लिए कुछ लोगों द्वारा जलवा जुडूम को भी एक कारण माना जा रहा है। शांति मिशन से संबंधित इस अभियान के माध्यम से ग्रामीण एवं आदिवासियों को एकजुट करने का सरकारी प्रयास बहुत मायनों में सफलता प्राप्त कर रहा है। कुछ नक्सली भी इसी के चलते आत्मसमर्पण कर चुके हैं।

केंद्रीय गृह सचिव ने नक्सलियों का आहवान करते हुए कहा है कि यदि वे हथियार डाल दे तो सरकार उनके साथ बातचीत के लिए तैयार है। उन्होंने राज्य सरकारों से भी कहा है कि वे सहानुभूति को सर्वोपरि स्थान देते हुए आत्मसमर्पण नीति तैयार करें। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने भी कहा है कि 'नक्सली समस्या के प्रति एक ऐसे मिश्रित रवैये की आवश्यकता है जिसमें नक्सलवादी हिंसा से दृढ़तापूर्वक, लेकिन परिष्कृत तरीके से निपटने के साथ–साथ विकासात्मक पहलुओं पर संवेदनशील दृष्टिकोण का समावेश हो। कारगर विधि व्यवस्था के माध्यम से नक्सली हिंसा से निपटने सहित सभी संभावित उपायों के निर्धारण का काम मुख्यमंत्रियों को अपने हाथों में लेना चाहिए।'

आंतरिक सुरक्षा से संबंधित मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में नक्सली हिंसा से निपटने की असली कुंजी अच्छी खुफिया व्यवस्था पर जोर दिया है। इसमें थाना–स्तर पर उपलब्ध प्रभावी जमीनी सूचनाओं का सामरिक एवं रणनीतिक दृष्टिकोण से कारगर समन्वय शामिल है। नक्सली गतिविधियों से निपटने में पुलिस को संवेदनशील एवं अत्याधुनिक बनाना भी अत्यंत जरूरी है। सुरक्षा बलों को नक्सलियों के विरुद्ध कार्यवाही से संबंधित विशेष प्रशिक्षण देने पर भी प्रधानमंत्री ने विशेष जोर दिया है।

(लेखक जूनी हटरी, राजनांदगांव, छत्तीसगढ़ में वाणिज्य संकाय के व्याख्याता हैं।)

ई–मेल : drskmishra_rjn@yahoo.com

नक्सलवादियों के बढ़ते हौंसलों को देखते हुए सभी प्रभावित राज्यों ने अपने सुरक्षा तंत्रों को मजबूती देने का काम शुरू कर दिया है। राज्य सरकारों द्वारा अब नक्सलियों की तर्ज पर ही दल गठित कर प्रशिक्षण को नई दिशा दी जा रही है। गृह मंत्रालय ने भी अगले 10 साल तक सीआरपीएफ की 118 बटालियनों को बढ़ाने और सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) की लगभग 40 बटालियनें बढ़ाने के सुझाव पर विचार शुरू कर दिया है। वर्तमान में सीआरपीएफ 201 और बीएसएफ 157 बटालियनों का संचालन कर रही है।

ग्रामीण दूरसंचार सेवा का विस्तार

सरकार का ग्यारहवीं योजना के अंत तक 20 करोड़ ग्रामीण कनेक्शन देने यानी 25 प्रतिशत ग्रामीण दूरसंचार घनत्व हासिल करने का प्रस्ताव है। अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में 8 करोड़ 80 लाख कनेक्शन दिये जाने के साथ 11 प्रतिशत लक्ष्य ही हासिल हुआ है। देश के दूरदराज क्षेत्रों में बेतार फोन सेवाएं प्रदान करने के लिए यूएसओ फंड के तहत बुनियादी ढांचे मजबूत करने के प्रयास किये जा रहे हैं। उनका कहना था कि बेहतर दूरसंचार कनेक्टिविटी से ग्रामीण क्षेत्रों को तीव्र विकास प्रक्रिया के साथ जोड़ने में मदद मिलेगी।

सन् 2012 तक 60 करोड़ कनेक्शन दिये जाने का लक्ष्य है, जिसके लिए अगले 5 वर्षों में 73 अरब डॉलर तक के उपकरणों की जरूरत पड़ेगी। उन्होंने कहा कि अधिकांश निवेश खासकर मोबाइल दूरसंचार के क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के जरिए पूरे होने की उम्मीद है। आज वोडाफोन, नोकिया, एलजी और एरिकसन जैसी सभी प्रमुख दूरसंचार कंपनियों की अपनी विनिर्माण इकाइयां हैं। सरकार के प्रयास से ब्रॉडबैंड उपभोक्ताओं की संख्या मार्च, 2005 के एक लाख 80 हजार से बढ़कर अगस्त, 2008 तक 40 लाख हो गई। इंटरनेट और ब्रॉडबैंड उपभोक्ताओं की संख्या 2010 तक क्रमशः 4 करोड़ तक पहुंचाने का लक्ष्य है। (पसूका)

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

पौष्टिक चारे से भरपूर बरसीम

डॉ. अंशु राहल

यह सर्वविदित है कि इस समय भारत का दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान है (102 मिलियन टन, 2007–08)। श्वेत क्रांति को बरकरार रखते हेतु यह आवश्यक है कि दुधारू पशुओं के उन्नतशील नस्लों में सुधार के साथ–साथ संतुलित पशु आहार की समुचित व्यवस्था भी हो। हरा चारा पौष्टिकता से भरपूर होना चाहिए। ऐसा ही प्रमुख चारा रबी मौसम का बरसीम है, जिसे इजिशियन क्लोवर भी कहते हैं। बरसीम का वानस्पतिक वैज्ञानिक नाम ट्राइफोलियम एलेक्जान्ड्रिनम है। बरसीम के हरे चारे में कैरोटिन नामक पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जो दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करता है। इसमें लगभग 20 प्रतिशत प्रोटीन और शुष्क पदार्थ की पाचनशीलता 70 प्रतिशत तक पाई जाती है। साथ ही इसके चारे में खाने वाले लवण जैसे कैल्शियम एवं फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। बरसीम से उत्तम किस्म का साइलेज भी तैयार किया जाता है। अंतिम कटाई के उपरांत बरसीम को हरी खाद के रूप में भी उपयोग कर सकते हैं। हल्की क्षारीय मृदाओं में भी इसे उगाया जा सकता है। बरसीम एक दलहनी फसल है जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को भूमि में एकत्रित करने की विशेष क्षमता रखती है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति में भी वृद्धि हो जाती है। बरसीम को प्रायः परंपरागत विधि से उगाया जाता है जिसके फलस्वरूप निम्न गुणवत्ता वाली कम उपज प्राप्त होती है। अतः उच्चगुणवत्ता वाली अधिक उपज लेने के लिए बरसीम को वैज्ञानिक विधि से ही उगाना चाहिए, जिसका उल्लेख नीचे दिया जा रहा है:

जलवायु

बरसीम की फसल के सफल उत्पादन हेतु अर्धशुष्क एवं ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। पौधों के समुचित विकास एवं बढ़वार के समय अत्यधिक ठण्ड/पाला या सूखा हानिकारक होते हैं। जल मग्न एवं भारी वर्षा वाले क्षेत्रों में भी इसे नहीं उगाया जा सकता है। उन सभी क्षेत्रों पर जहां 150 से.मी. से कम वर्षा होती है, बरसीम को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। कम वर्षा वाले स्थानों पर बरसीम को सिंचाई की सुनिश्चित व्यवस्था होने पर ही उगाया जा सकता है।

बरसीम की अच्छी वृद्धि के लिए 15–25 से. ग्रेड तापमान उत्तम माना गया है। यदि फसल बीजोत्पादन के लिए उगानी है, तो फसल को पकने के समय अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। तापमान 40^0 से. ग्रेड से अधिक होने पर इसके पौधे कटाई के उपरांत पुनः वृद्धि करने में असमर्थ होते हैं।

भूमि का चुनाव

बरसीम की खेती प्रायः सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, किन्तु सामान्यतः भारी दोमट मृदा जिसकी जलधारण क्षमता अधिक हो, फसल की बढ़ोत्तरी एवं उपज की दृष्टि से सर्वोत्तम मानी जाती है। खेती में सिंचाई एवं जल निकास का उचित प्रबंध अनिवार्य है। हल्की क्षारीय भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है, परंतु अम्लीय मृदाओं में बरसीम की खेती बिल्कुल भी संभव नहीं है। हल्की मृदाओं में सिंचाई की संख्या बढ़ाकर बरसीम की फसल उगाई जा सकती है।

उन्नत किस्मों का चुनाव

बरसीम का स्वस्थ पौधा

बरसीम की किस्मों को उनमें पाये जाने वाले सूत्रकृमि (क्रोमोजोम) की संख्या के आधार पर डिप्लायड एवं टेट्राप्लायड दो भागों में विभाजित करते हैं :

डिप्लायड किस्में : इसके अंतर्गत प्रमुख रूप से निम्नलिखित किस्में आती हैं :

मिस्कावी : प्रारंभ से ही यह किस्म उपयोग की जा रही है। पौधे सीधे बढ़ने वाले, तने मुलायम व पत्तियों के किनारे गोल होते हैं। फूल गोल एवं श्वेत रंग के होते हैं। इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 800–900 क्विंटल हरा चारा प्राप्त हो जाता है। यह पत्ते की सहनशीलन किस्म है। नवंबर–दिसंबर में ही हरा चारा दे देती है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली, पंजाब व हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड राज्यों में उगाने हेतु उपयुक्त किस्म है।

बरसीम लुधियाना 1 : इस किस्म का विकास पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा किया गया है। यह मिस्कावी किस्म की अपेक्षा 25–30 प्रतिशत तक अधिक चारा दे देती है। इस किस्म के पौधों में अधिक शाखाएं फूटती हैं और प्रति हैक्टेयर लगभग 1100 –1200 क्विंटल हरा चारा दे देती है। 15 मई तक यह किस्म हरी बनी रहती है।

पहली कटाई के लिए बरसीम एवं सरसों की मिश्रित खेती

टेट्राप्लायड किस्में टेट्राप्लायड के अंतर्गत प्रमुख रूप से निम्नलिखित किस्में आती हैं :

पूसा जायन्ट : इस किस्म का विकास भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किया गया है। इसकी पत्तियां चौड़ी अपेक्षाकृत मोटी, कोमल व हरे रंग की होती हैं। यह किस्म पाले को सहन कर लेती है। देशी किस्मों की अपेक्षा यह किस्म लगभग 15 प्रतिशत अधिक उपज देती है।

अन्य टेट्राप्लायड किस्में हैं:

1. टाईप 526, 2. टाईप, 678, 3. टाईप 780, /**अन्य उन्नत किस्में** – जे. बी. 1, 2 व 4 – बी. एल. 10, 22, व 52 – यू.पी. बी. 1 – बन्देल 2 – जे. एच. बी. 146 – एच.एफ. बी. 476 आदि है।

वरदान (एस–99–1) : यह किस्म मुख्य रूप से देश के उत्तरी राज्यों के लिए विकसित की गई है। यह किस्म 150 से 160 दिनों में फलती है तथा इससे चार–पांच कटाइयां भी ली जा सकती हैं।

बरसीम की नवीनतम किस्म

बी. एल. 180 : इस किस्म का विकास पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा किया गया है। इस किस्म से कल्बे काफी फूटते हैं। इस किस्म की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें तना विगलन व मूल विगलन नामक रोग कम लगते हैं। यह किस्म पंजाब, उत्तर प्रदेश में उगाने के लिए उपयुक्त है।

भूमि की तैयारी : बरसीम का बीज आकार में छोटा होता है। अतः सुगम एवं अच्छे अंकुरण हेतु खेत की अच्छी तैयारी नितान्त आवश्यक है। बरसीम की फसल सामान्यतः मक्का, ज्वार, बाजरे या धान की फसलों के बाद उगाई जाती है। इन फसलों की कटाई के बाद एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करके 3–4 बार हैरो चलाकर खेत को समतल बना देना चाहिए। खेत में ढेले नहीं होने चाहिए, खेत को समतल करने के बाद छोटी–छोटी क्यारियों में बांट देना चाहिए क्योंकि बरसीम की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी पड़ती है।

बुवाई का समय

बरसीम की सर्वाधिक उपज लेने के लिए इसकी बुवाई अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में करनी चाहिए। समय से पूर्व बुवाई करने से अधिक तापमान के कारण अंकुरण एवं जमाव कम होता है और देर से होने वाली वर्षा से हानि हो सकती है। खेत में खरपतवार भी अधिक उगते हैं, जबकि देर से बुवाई करने पर कम तापमान रहने के कारण पौधों के विकास एवं बढ़वार दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बीज की मात्रा

बरसीम की अच्छी पैदावार लेने के लिए बीज हमेशा प्रमाणित स्रोत से ही प्राप्त करना चाहिए। 25–30 किलोग्राम बीज एक हैक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है। जल्दी या देर से बोने पर एक हैक्टेयर में 30–35 किलोग्राम बीज बोना चाहिए।

पहली कटाई से अधिक उपज लेने के लिए सैंजी, जई या लाही/सरसों का बीज मिलाकर बोना चाहिए। एक हैक्टेयर के बरसीम के बीज के साथ 40–50 किलोग्राम सैंजी या जई और 1.5 –2.0 किलोग्राम सरसों या लाही का बीज बोना चाहिए। जई का बीज बरसीम का बीज बोने से पूर्व खेतों में डालकर देशी हल या ट्रैक्टर से मिला देना चाहिए।

बीजोपचार

बरसीम के बीज में प्रायः कासनी का बीज मिला होता है जिसे अलग करने हेतु बीज को 5 प्रतिशत नमक के घोल में डुबो देना चाहते है। ऐसा करने से बरसीम का बीज नीचे बैठ जाता है और

कासनी का बीज ऊपर तैरता रहता है। अतः उसे निकाल कर फेंक देना चाहिए और नीचे बैठे बरसीम के बीज को बोने से पहले 2–3 बार अच्छी तरह से साफ पानी में धोकर, इसके बाद छायादार जगह पर सुखाकर बुवाई के काम में लिया जा सकता है। जिस खेत में बरसीम की बुवाई पहली बार की जा रही हो, उसमें बोने से पूर्व राजोबिमय– ट्राइफोलिआई नामक जीवाणु से बीज उपचारित करना अति आवश्यक है। इसके लिए 4 पैकेट प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होते है। इसके लिए गर्म पानी में 250 ग्राम गुड़ का 10 प्रतिशत घोल बना लेना चाहिए, फिर घोल को ठण्डा करके उसमें कल्चर पाउडर मिलाकर उसमें बीजों को उपचारित कर छाया में सुखाकर बुवाई के काम में लेना चाहिए।

बरसीम की पुष्पावस्था

यदि राजोबियम कल्चर उपलब्ध न हो सके तो ऐसे खेतों में जहां पर विगत वर्षों में बरसीम उगाई गई थी ऊपर सतह से (5–6 से.मी.) 4–5 क्विंटल मिट्टी लेकर नम खेत में समान रूप से बिखेर देनी चाहिए। इस विधि को अपनाने से राजोबियम कल्चर मिलाने की विधि के बराबर लाभ प्राप्त होता है।

बुवाई की विधि

बरसीम की बुवाई प्रायः खेत में 5–7 से.मी. पानी भरने के बाद की जाती है। बुवाई की यह विधि काफी लोकप्रिय है, लेकिन कई क्षेत्रों में बुवाई के बाद खेत में 5–7 से.मी. पानी भरा जाता है। कई कृषक अंकुरण के उपरांत पानी भरते हैं। जब क्यारियां तैयार हो जाएं तो उनमें सिंचाई द्वारा 5–7 से.मी. तक पानी भर देना चाहिए। इसके तुरंत बाद बीज छिड़क कर बुवाई कर देनी चाहिए। इससे यह लाभ होता है कि बुवाई के बाद बीजों पर मिट्टी, की एक तह जम जाती है जिसमें बीजों का चिड़ियों या अन्य पक्षियों से बचाव हो जाता है। इसके अतिरिक्त बीज को चारों तरफ से उचित मात्रा में नमी मिल जाने से अंकुरण शीघ्र एवं अच्छा होता है।

धान उगाने वाले कुछ क्षेत्रों में धान की खड़ी फसल में बरसीम की बुवाई की जाती है। सितंबर के दूसरे पखवाड़े में धान के खेत में बरसीम का बीज भिगोकर बिखेर दिया जाता है। इस विधि से बुवाई करने पर बीज को 12 घंटे तक पानी में भिगोकर छाया में सुखा लिया जाता है। बुवाई के समय खेत में थोड़ा पानी रखा रहना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

बरसीम एक दलहनी वर्ग की फसल होने के कारण वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को भूमि में संचित करती है और स्वयं नाइट्रोजन का उपयोग करती है। मृदा जांच के उपरांत ही खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए। यदि किसी कारणवश मृदा जांच न हो सके तो उस स्थिति में प्रति हैक्टेयर निम्नलिखित मात्रा में खाद एक उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।

गोबर की गली–सड़ी खाद	– 10–15 टन
नाइट्रोजन	– 20–30 कि.ग्रा.
फॉस्फोरस	– 50–60 कि.ग्रा.

गोबर की खाद को प्रथम जुताई से पूर्व खेत में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। नाइट्रोजन व फॉस्फोरस वाले उर्वरकों का मिश्रण बनाकर अंतिम जुताई के समय खेत में समान रूप से बिखेर देना चाहिए।

यदि मिट्टी हल्की हो और धान–बरसीम फसल चक्र अपनाया जाता है, वहां मैंगनीज तत्व की कमी के लक्षण पौधों में पाये जाते हैं। ऐसी मिट्टी में 2.5 कि.ग्रा. मैंगनीज सल्फेट 800–1000 लीटर पानी में घोल बनाकर एक हैक्टेयर में 2–3 बार छिड़काव सप्ताह के अंत पर करना चाहिए। यदि खेत में बोरोन व मोलिब्डेनम की कमी हो तो ऐसी अवस्था में बोरोन व मोलिब्डेनम का छिड़काव करना चाहिए।

शीघ्र वानस्पतिक वृद्धि के लिए प्रथम कटाई के 30 दिन बाद 20 किलोग्राम नाइट्रोजन की आवश्यकता पड़ती है तथा प्रत्येक कटाई के पश्चात 20 किलोग्राम नाइट्रोजन सिंचाई के साथ प्रयोग करें। सल्फरयुक्त उर्वरकों के प्रयोग (अमोनियम सल्फेट और सिंगल सुपर फॉस्फेट) से क्षारीय भूमि पर अधिक उत्पादन लिया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण

बरसीम की फसल के साथ बुइन (पोआएन्नुआ) कुछ क्षेत्रों में विशेष रूप से उगता है और प्रारंभिक अवस्था में अधिक क्षति पहुंचाता है। इस खरपतवार की रोकथाम के लिए बासालिन (फ्लूक्लोरोलिन) 45 ई.सी. की एक लीटर दवा 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई से पूर्व खेत में छिड़काव करना चाहिए।

कुछ क्षेत्रों में इटसिट (टाइएनथीमा प्योरटुला–कारस्टम) नामक खरपतवार की समस्या हो, वहां पर बरसीम के साथ राई मिलाकर बुवाई करनी चाहिए, क्योंकि राई तीव्र गति से बढ़ने वाली फसल है इसलिए यह खरपतवारों को बढ़ने नहीं देती है।

इन खरपतवारों के अतिरिक्त आरंभ में बथुआ, खरबथुआ, दूब घास, कृष्ण नील, जंगली प्याजी, गजरी, सैंजी, कासनी आदि खरपतवार बरसीन की फसल में दिखाई देते हैं। यदि आरंभ में फसल इन खरपतवारों से दब जाती है बढ़ नहीं पाती जिससे उपज में काफी कमी हो जाती है। अतः जहां तक संभव हो फसल अंकुरण के बाद निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। फसलचक्र अवश्य अपनायें जिससे खरपतवारों का नियंत्रण आसानी से किया जा सके। फसल की आरंभिक अवस्था में एक–दो कटाई जल्दी करके भी एकवर्षीय खरपतवारों पर आसानी से काबू पाया जा सकता है।

सिंचाई एवं जल निकास

प्रारंभ में अच्छे अंकुरण एवं वृद्धि हेतु 7–10 दिन के अंतराल पर हल्की–हल्की दो सिंचाई करना लाभदायक है। बाद में मृदा व मौसम के अनुसार 15–20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करने की आवश्यकता होती है। भारी मृदाओं में सिंचाई, हल्की मृदाओं की अपेक्षा कम होती है। हल्की मृदाओं में प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई आवश्यक होती है। सामान्यतः बरसीम की फसल के लिए 12–16 सिंचाई पर्याप्त होती है। मार्च–अप्रैल में 10–15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

आवश्यकता से अधिक पानी बरसीम के अंकुरण व वृद्धि के लिए हानिकारक होता है। अतः पानी तुरन्त निकालने की व्यवस्था करनी चाहिए।

बरसीम के प्रमुख रोग नियंत्रण

तना विगलन : यह एक फफूंदी जनित रोग है। यह बढ़वार की प्रारंभिक अवस्था में लगता है। इस रोग के कारण तना गल जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए:

- बुवाई के लिए रोगमुक्त फसल का बीज प्रयोग करना चाहिए।
- रोग से ग्रस्त खेत में 3–4 वर्ष तक बरसीम नहीं उगानी चाहिए।
- रोग के लक्षण दिखाई देने पर प्रथम कटाई के उपरांत एक किलोग्राम बैविस्टीन को 500 लीटर पानी में धोकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कटाई प्रबन्ध/व्यवस्था

बरसीम की प्रथम कटाई, बुवाई के 50–55 दिन के मध्य ली जा सकती है। अन्य कटाइयां 30 से 35 दिन के अंतराल पर लेने से अच्छी उपज प्राप्त होती है। पौधों में अधिक पुनरावृद्धि और उत्पादन प्राप्त करने के लिए फसल को जमीन की सतह से 5 से 7 से.मी. की ऊंचाई पर काटना आवश्यक है। बरसीम की फसल से हरा चारा नवंबर के अंत से लेकर अप्रैल तक मिलता है। प्रायः यह देखा गया है कि प्रथम कटाई के दौरान कम उपज मिलती है, परन्तु दूसरी और तीसरी कटाई के समय सबसे अधिक उपज मिलती है। फूल आने के बाद बीज वाली फसल में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। मई में लू चलने से परागण व निषेचन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

उपज

बरसीम की उपज कई बातों पर निर्भर करती है, उनमें भूमि की उर्वरा शक्ति, उगाई जाने वाली किस्म और फसल की देखभाल प्रमुख हैं। यदि उपरोक्त वर्णित उन्नत एवं वैज्ञानिक विधि से बरसीम की खेती की जाए तो प्रति हैक्टेयर लगभग 1000–1200 क्विंटल तक हरा चारा मिल जाता है। इसमें लगभग 15–18 प्रतिशत तक शुष्क पदार्थ पाया जाता है, जबकि बीज वाली फसल से लगभग 4–5 क्विंटल बीज और 400–500 क्विंटल तक हरा चारा प्रति हैक्टेयर मिल जाता है।

(लेखिका पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, पंतनगर के पशु पोषण विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं)

ई–मेल : anshurahal@rediffmail.com

रोग निवारक दही और छाछ

डॉ. जय सिंह

हमारे देश में शाकाहारियों की संख्या मांसाहारियों से अधिक है जिनके लिए दूध तथा दूध से निर्मित पदार्थ ही पशु प्रोटीन की आपूर्ति के एकमात्र साधन हैं। मांसाहारियों को मांस, मछली, अण्डा इत्यादि के अलावा दूध तथा दुग्ध पदार्थों से भी शरीर के लिए आवश्यक उपयोगी तत्वों की प्राप्ति हो जाती है, लेकिन शाकाहारियों के लिए सीमित विकल्प के रूप में दूध एवं फल में उपस्थित पदार्थों के द्वारा ही आवश्यक और उपयोगी तत्वों की प्राप्ति संभव है। अतः शरीर के लिए दूध, दही या दही से निर्मित पदार्थ तथा फल आवश्यक उपयोगी तत्वों की आपूर्ति के श्रेष्ठतम साधन हैं।

दही की विशेषताएं

भारत एक कृषि प्रधान देश है यहां खेती के साथ ही पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन भी परंपरागत ग्रामीण व्यवसाय हैं। दुधारू पशुओं और दुग्ध उत्पादन में भारत विश्व के शीर्षस्थ राष्ट्रों में है।

दूध से बनने वाले खाद्य पदार्थों में दही की मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयोगी भूमिका है। दूध की अपेक्षा दही में विटामिन बी12, फोलिक अम्ल तथा नाइसिन की मात्रा बढ़ जाती है। इन विटामिनों की आवश्यकता भी हर अवस्था के मनुष्यों को होती है। विशेषज्ञों का मत है कि एक निश्चित समयावधि के अंतराल पर दही की समुचित मात्रा लेने वाला व्यक्ति सदैव निरोग रहता है और उसकी उम्र बढ़ जाती है।

दही अत्यंत सुपाच्य होती है, यह पेट में पहुंचकर जल्दी ही पचने लगती है क्योंकि जीवाणु दुग्ध अवयवों को शीघ्र पाचन योग्य बना देते हैं। दही में स्थित अम्ल आमाशय में उपस्थित कोलाईफार्म बैक्टीरिया को नष्ट कर देते हैं, जिससे अमाशय की दीवारों में होने वाली प्रोटीन की सड़न रुक जाती है। जिन लोगों को दूध अच्छा नहीं लगता या पच नहीं पाता, दही उनके लिए भी सुपाच्य रहती है। दूध न पचने का मुख्य कारण बड़ी उम्र के लोगों में लैक्टेजएजाइम का अभाव होता है। दही में अम्ल की उपस्थिति के कारण पेट में पहुंचने वाले दस्त के रोगाणु भी मर कर समाप्त हो जाते हैं, जिससे दही या उससे बने हल्के पदार्थों के सेवन से दस्त रुक जाती है। दूध में उपस्थित कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम एवं अन्य लवण दही के रूप में शरीर में पहुंचकर शीघ्र ही पच जाते हैं। दही या इससे बने पदार्थों से शरीर में कोलेस्ट्राल की मात्रा नहीं बढ़ती जबकि दूध के सेवन से इसकी वृद्धि होती है। कोलेस्ट्राल की अधिकता से मनुष्य में हृदयाघात और लकवा की संभावना बढ़ जाती है।

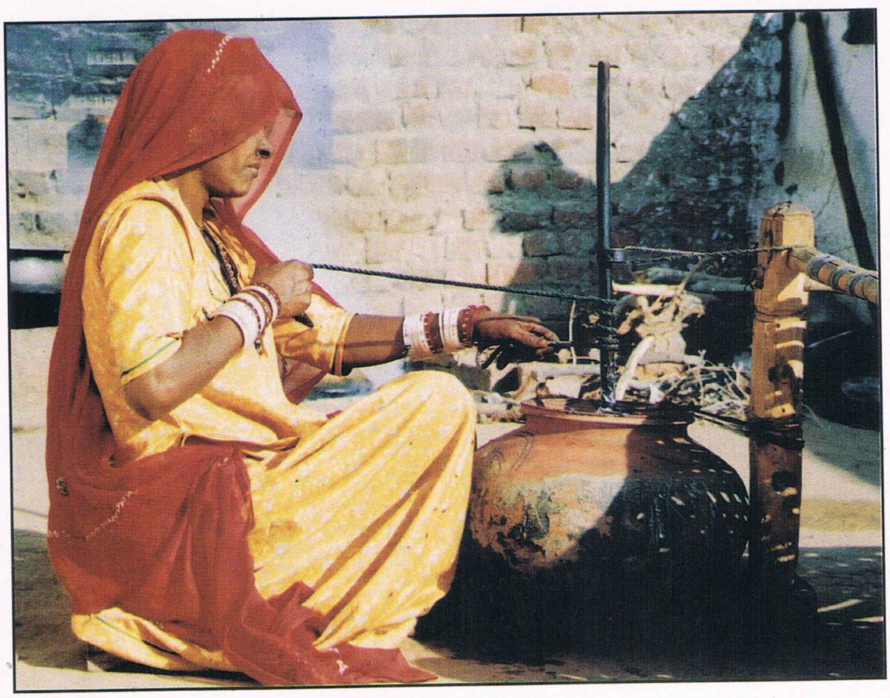

दही बिलोती ग्रामीण महिला

प्राचीन भारत में दही और तक्र

भारतीय ग्रंथों में दही के जामन (कल्चर) का उल्लेख नौवीं शताब्दी ईसा पूर्व में मिलता है, दही से लस्सी बनाने की प्रक्रिया का उल्लेख 800–300 ईसा पूर्व के भारतीय धर्मग्रंथों में हुआ है। आयुर्वेद में दही से बनने वाले तक्र (छाछ) के विषय में कहा गया है कि –

न तक्र सेवी व्यथते कदाचित
न तक्र दग्धा प्रभवन्ति रोगा,
यथा शुराणांम्मृतं प्रधानं,
तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः।

अर्थात् तक्र का प्रयोग करने वाला व्यक्ति कभी पीड़ा (रोग), नहीं पाता, 'तक्र चिकित्सा' द्वारा नष्ट किए गए रोग दुबारा नहीं होते। जिस प्रकार स्वर्ग में देवताओं को निरोग रखने में अमृत की भूमिका है, उसी प्रकार पृथ्वी पर निवास करने वाले मनुष्यों को निरोग रखने में तक्र की भूमिका है।

चर्चित संस्कृत ग्रंथ 'क्षेमकुतुहल' में कहा गया है–

अमरत्वं यथा स्वर्गे देवानाममृताद्भवेत्।

तक्राद भूमौ तथा नराणाममरत्वं ही जायते।।

अर्थात् जिस प्रकार स्वर्ग में अमृत की सुलभता से देवगण अमर हो जाते हैं, ठीक उसी प्रकार इस पृथ्वी पर रहने वाले लोग छाछ के कारण अमर हो सकते हैं।

इसी प्रकार एक अन्य श्लोक में छाछ की विशेषता बताते हुए कहा गया है –

अमृतं दुर्लभं नृणां, देवानामुदकं तथा।

पितृणां दुर्लभःपुत्रस्तक्रं शक्रस्य दुर्लभम्।।

जैसे मनुष्यों के लिए अमृत, देवताओं के लिए जल, पितरों के लिए पुत्र दुर्लभ होता है ठीक उसी प्रकार इंद्र (देवराज) के लिए छाछ दुर्लभ है।

छाछ की विशेषताओं की चर्चा के इसी क्रम में एक स्थान पर इसकी रोग निवारक क्षमताओं को संदर्भित करते हुए कहा गया है–

कैलाशे यदि तक्रमास्ति गिरिशः किं नीलकण्ठो भवेत्।

बैकुण्ठे यदि कृष्णतामनु भेवदद्यापि किं केशवेः।।

इंद्रो दुर्भगतां क्षयं द्विजपतिर्लम्बोदरत्वं गणः

कुण्ठितं च कुबेरको दहनतासग्निश्च कि विन्दति।।

अर्थात् कैलाश में यदि छाछ (तक्र) सुलभ होता तो विषप्राशन के बाद शिव को नीलकण्ठ नहीं होना पड़ता। यदि स्वर्ग में छाछ मिल सकता तो कृष्ण को काला, इंद्र को भगों से ग्रस्त, चंद्रमा को क्षय से युक्त, कुबेर को कुष्ठ से ग्रस्त, गणपति को लंबोदर और अग्नि को दाहयुक्त न होना पड़ता।

श्रेष्ठतम आहार व्यवस्था का वर्णन करते हुए भारतीय शास्त्रकारों ने बताया है कि–

भोजनांते पिणेत्तक्रं, वासरांते पिबेत्पययः।

निशांते च पिवेत्वारि त्रिभिर्रोगो न जायते।।

अर्थात् भोजन के अंत में छाछ, दिन के अंत में दूध और रात्रि के अंत में जल का सेवन करने वाला व्यक्ति कभी रोगी नहीं हो सकता।

तक्र के विषय में चर्चा करते हुए 'क्षेमकुतूहल' में कहा गया है–

शशि कुंद समुज्वल शङ्खनिभं युवतीकरनिर्मित निर्मथितम्।

घृत सैन्धवहिंगुयुतं मधुरं पिन तक्रमहोनृप रोगहरम्।।

अर्थात् चंद्रमा के समान चमकते सुंदर दांतों वाली और शङ्ख के जैसी (गौर वर्ण) तरुणियों द्वारा मथकर तैयार किए गए घी, सेंधानमक और हींग से युक्त सर्वरोगहारक तक्र (छाछ), हे राजन्! तुम पिया करो।

रोगोपचार में दही और तक्र

प्राचीन भारतीय चिकित्साशास्त्र में दही को अनेक रोगों में उपयोगी बताया गया है। काय चिकित्सा के जनक महर्षि चरक ने दही को अग्नि दीपक, बलवर्धक, शुक्रवर्धक, शरीर में स्निग्धता लाने वाला, वातनाशक, वीर्यवर्द्धक और वीर्य में उष्णता लाने वाला बताया है। शल्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य सुश्रुत ने दही को प्राण एवं शक्तिवर्धक वृष्य गुणों से युक्त बताया है।

उदर रोगों में छाछ को अत्यंत उपयोगी बताते हुए 'क्षेमकुतूहल' में कहा गया है–

तक्रं रुचिकरं बन्हिदीपनं पाचनपरम्।

उदरे ये गदास्तेषां नाशनं तृप्तिकारकम्।।

अर्थात् – तक्र रुचि उत्पन्न करने वाला, जठराग्नि दीपक, अत्यंत पाचक, उदर रोगों का नाशक और तृप्तिकारक होता है।

वात, पित्त और कफ विकारों में तक्र की उपयोग विधि का वर्णन करते हुए क्षेम कुतुहल में कहा गया है कि–

वातेडम्लं, सैन्धवोपेतं, स्वादुपित्ते, सशर्करम्।

पिवेतक्रं कफे चापि ब्योपक्षारसमन्तितम्।।

इस श्लोक में वात रोगों में खट्टी दही से बने तक्र के सेंधा नमक के साथ उपयोग की बात कही गई है (कुछ अनुभवी लोगों का कथन है कि वात रोगों के लिए खट्टी दही से बने छाछ में सेंधा नमक के साथ ही सोंठ के प्रयोग से वात से मुक्ति और आसान हो जाती हैं।) पित्त विकार में स्वादिष्ट मीठी दही से बने छाछ में शर्करा मिलाकर प्रयोग की इस श्लोक में सलाह दी गई है। कफ रोगों में पिप्पली, काली मिर्च और सोंठ के बराबर भाग के चूर्ण को जिसे त्रिकट या व्योंष भी कहा जाता है, को क्षार के साथ छाछ में मिलाकर प्रयोग की सलाह दी गई है।

विभिन्न रोगों में छाछ का प्रयोग

अजीर्ण की शिकायत होने पर भोजन बंद करके गाय के दूध से निर्मित दही के छाछ का सेवन करना चाहिए। इस छाछ में एक चुटकी भुना जीरा, दस दाना काली मिर्च और दस ग्राम सेंधा नमक को चूर्ण करके मिला लेना चाहिए। इस छाछ को घूंट–घूंट भर मुंह में लेकर चुस्की लेते हुए पीना चाहिए। यह प्रयोग केवल दिन में करना चाहिए। रात में भूख लगने पर बिना घी की खिचड़ी या दलिया लेना चाहिए। अपच होने पर छाछ में सूखा पुदीना, भुना हुआ जीरा और काली मिर्च मिलाकर लेना चाहिए।

दस्त में छाछ अत्यंत उपयोगी है। यहां ध्यान रखने की बात यह है कि दस्त कई कारणों से हो सकता है। अतः उन कारणों पर ध्यान रखते हुए लक्षणों के आधार पर छाछ का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए –

अजीर्ण के कारण दस्त में जब मल से तेज दुर्गंध आती हो तथा पेशाब भी हो रहा हो तो दस ग्राम बरगद की जटा का मुलायम हिस्सा लेकर पीस–छानकर छाछ में मिलाकर पीना चाहिए। स्वाद के लिए इस छाछ में थोड़ा सेंधा नमक भी मिलाया जा सकता है, लेकिन फीका छाछ पीने पर शीघ्र लाभ होगा और मल बंधकर आने लगेगा। यदि बरगद की जटा न मिल सके तो छाछ में 5–6 ग्राम ईसबगोल की भूसी मिलाकर लेना चाहिए।

अपच या अजीर्ण के कारण आंव पड़ रहा हो जिसके कारण बदन और पेट में दर्द हो तो 5 ग्राम जावित्री के चूर्ण को छाछ में मिलाकर लेना चाहिए।

दस्त में यदि आम की गुठली को पीसकर छाछ में मिलाकर तीन बार पिये इससे किसी भी तरह का अतिसार पांच–छः घण्टे में ठीक हो जायेगा।

अम्ल पित्त के कारण होने वाले अपच में छाछ में मिश्री व काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर पीना चाहिए। इससे रक्त की शुद्धि हो जाती है तथा अम्लता का निवारण और पित्त का शमन हो जाता है। ऐसे में दो दिन में कम से कम छः बार एक–एक गिलास छाछ अवश्य लेना चाहिए।

एग्जिमाग्रस्त अंग पर नीम की कोपलों को पीस कर छाछ में मिलाकर लेप लगाना चाहिए। इसके साथ ही दिन से तीन बार ताजे दही की छाछ का सेवन करना चाहिए। इसमें चाय, काफी, शरबत तथा नशे की चीजों का प्रयोग बंद कर देना चाहिए।

वातजनित कमर और जोड़ों के दर्द एवं गठिया में तीन–चार ग्राम सोंठ का चूर्ण तथा लहसुन की पांच छः कलियों का रस छाछ में मिलाकर लेना चाहिए।

पीलिया में छाछ का भरपूर सेवन करना चाहिए। इसके साथ ही सौ ग्राम दही में दस ग्राम पिसी हुई हल्दी को मिलाकर दिन में चार बार सेवन करना चाहिए।

बालों को झड़ने से रोकने के लिए बासी मट्ठे या दही से बालों को धोयें। यदि दही को तांबे के बर्तन में जमाया जाय तो और लाभ होगा। इसमें दो–तीन दिन का बासी मट्ठा और दही अधिक लाभ पहुंचाती है।

मोटापा दूर करने के लिए सुबह मंजन करने के बाद छाछ में जीरा, पुदीना, काली मिर्च और सेंधा नमक मिलाकर नियमित सुबह खाली पेट तीन महीना लेने से शरीर सुडौल हो जाता है।

मंगलकारी दही

दही की उपरोक्त विशेषताओं के कारण भारतीय जीवन प्रणाली में दही को विशेष स्थान प्राप्त है। हिंदू परंपरा में दही को अत्यंत मंगल सूचक माना जाता है। पूजा–पाठ, शादी, ब्याह यज्ञादिक, सभी कार्यों में दही का प्रयोग चरणामृत और प्रसाद के रूप में होता है। हिंदुओं के पूजा–पाठ, यात्रा–अनुष्ठान या किसी नये कार्य के शुभारंभ में दही का टीका लगाकर मंगलकामना की जाती है।

दही प्रयोग में वर्जनाएं

तमाम विशेषताओं के बावजूद कुछ आयुर्वेदिक विशेषज्ञों ने दही के प्रयोग में कुछ सावधानी बरतने का भी निर्देश दिया है। कफ और बढ़े हुए स्नोफिलिया, दमा के रोगियों के लिए भोजन में दही सेवन का निषेध किया है। दही के लगातार पूर्ण आहार के रूप में प्रयोग की भी मनाही की गई है।

(लेखक पशुपालन एवं दुग्ध विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय में प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हैं।)

हमारे आगामी अंक

दिसंबर, 2008 – भारतीय जनजाति और उनका संरक्षण।
जनवरी, 2009 – ग्रामीण विकास योजनाएं।
फरवरी, 2009 – किसानों के विकास की योजनाएं।
मार्च, 2009 – महिलाओं की कल्याणकारी योजनाओं पर आधारित होगा।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, परिवहन, सड़कें, बिजली, कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे । उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं । पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

2 अक्तूबर, 2008

विश्व भर में मनाया जा रहा है

अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस

**"अहिंसा
मानव जाति की
सबसे बड़ी शक्ति है"**

महात्मा गांधी

davp 22202/13/0134/0809

**सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार**

KH-11/08/03

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2006–08
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना